बस्तर में जंग की लकीरों के बीच एक लड़की की मोहब्बत
और हौसले की दास्तान। यह कहानी किसी एक्शन
मूवी की तरह आँखों के सामने दौड़ती है।

-तिग्मांशु धूलिया
(अभिनेता और निर्देशक)

लाल लकीर

हृदयेश जोशी

लाल लकीर

हृदयेश जोशी

हार्परकॉलिंस पब्लिशर्स इंडिया

बस्तर के लोगों के लिए

18 अप्रैल, 1998

धांय... धांय... धांय...

'पकड़ो सालों को !' वह चिल्लाया।

गोलियाँ चलने से पहले ही दोनों बागियों ने भागना शुरू कर दिया था। पुलिस अफ़सर अपनी टीम के साथ उनके पीछे दौड़ा। उसके साथ एक इंस्पेक्टर, दो सब इंस्पेक्टर और 18 जवान थे। एसपी संचित चौधरी ने इस ऑपरेशन के लिए कई दिन से तैयारी की थी। वह आज अपनी टीम के सबसे भरोसेमन्द और ट्रेन्ड लोगों को लेकर निकला था। ऑपरेशन का मकसद था दक्षिण बस्तर के दो सबसे कट्टर माओवादियों को पकड़ना। इसीलिये बस्तर के अरनपुर से कुछ किलोमीटर दूर काली पहाड़ी पर आज सुबह से ही पुलिस किसी का इन्तज़ार कर रही थी। चुपचाप, छुपकर।

संचित चौधरी पाँच महीने पहले ही दन्तेवाड़ा का एसपी बनकर आया था। 28 साल का नौजवान पुलिस अफ़सर जोश से भरा था और किसी भी हाल में अपनी काबिलियत साबित करना चाहता था। दन्तेवाड़ा आने के कुछ दिनों के भीतर ही उस पर जानलेवा हमला हुआ। वह माओवादियों की ओर से किये गये बारूदी सुरंग के धमाके में बाल-बाल बचा था। तब से हर पल चौकस रहता। उस दिन संचित यह भी समझ गया था कि यहाँ गोली और बन्दूक ही नहीं, मुख़बिरों के नेटवर्क भी चाहिये।

आज दक्षिण बस्तर के दो लोकल नक्सली कमाण्डर पुलिस के घेरे में थे। अप्पल राजू और करतम गंगा। राजू और गंगा पिछले दो सालों से दक्षिण बस्तर के इस इलाके में लिबरेटेड ज़ोन का फैलाव करने की कोशिश में जुटे थे। पूरे बस्तर का कमाण्डर नक्सली नेता बीरम राव इन दोनों पर सबसे अधिक भरोसा करता। उसने इन दोनों पर माओवादी विचारधारा का प्रचार करने से से लेकर बारूदी सुरंगें बिछाने और काडर में नई भर्तियाँ करने तक की सारी ज़िम्मेदारियाँ सौंपी हुई थीं।

'परगेत्तू... परगेत्तू... किन्दमिंची स्पीडगा परगेत्तू' (भाग... भाग... भाग... नीचे से निकल), राजू चिल्लाया।

अप्पल राजू मूल रूप से आंध्र प्रदेश के श्रीकाकुलम का रहने वाला था और करतम गंगा एक गोंड आदिवासी था। ऐसे नाज़ुक वक्त राजू के मुँह से अपनी ज़ुबान तेलगू में ही बात निकली, हालाँकि वह दो सालों से यहाँ रहते रहते गोंडी सीख गया था। गंगा को तेलगू समझने में कोई दिक्कत नहीं होती थी क्योंकि वह बचपन से तेलगू माओवादी कमाण्डरों के साथ ही रहा और आंध्र प्रदेश में भी उसने लम्बा वक्त गुजारा था।

धांय... धांय...

दो और गोलियाँ पीछे से आयीं। राजू और गंगा काली पहाड़ी पर अपनी दाईं ओर तेज़ी से दौड़ने लगे। दोनों ही माओवादी इन पहाड़ियों को अपने घर के आंगन की तरह जानते समझते थे। उन्हें पता था कि अगर वह इस पहाड़ी पर एक किलोमीटर तक बिना घायल हुए दौड़ गये तो पुलिस वालों को छका लेंगे।

गंगा ने रुक कर अपनी कमर पर बंधी पेटी से एक ग्रेनेड निकाला। उसकी पिन हटाई और उसे अपने पीछे भागती पुलिस पार्टी पर फेंका।

'हअ...टो...ओ...ओ, फैअ...ल जा...आ... ओ...,' इंस्पेक्टर अनुपम शुक्ला चिल्लाया। उसने गंगा को अपनी ओर ग्रेनेड फेंकते देख लिया था। पुलिस पार्टी के सारे लोग तेज़ी से फैल गये और ग्रेनेड के फटने से पहले सारे पुलिस वाले ज़मीन पर लेट चुके थे।

ज़्यादातर लोग बच गये लेकिन ग्रेनेड से निकले कुछ छर्रे एक कांस्टेबल कन्नू के पैर और सब इंस्पेक्टर अंसारी के गाल, कंधे और पसलियों पर लगे। अंसारी उठा और माओवादियों के पीछे दौड़ने लगा, जैसे उसे कुछ हुआ ही न हो।

'पकड़ो मा...आ... दरचोद को,' वह चिल्लाया।

उसके पीछे बाकी पुलिस वालों के साथ कन्नू भी भागा।

एसपी संचित ने ये टीम ऐसे ही वक्त के लिए तैयार की थी। अंसारी और कन्नू जैसे लड़के उसके कहने पर जान पर खेल सकते थे। अंसारी अचूक निशानेबाज़ था और कन्नू एक गोंड आदिवासी जो इन जंगली रास्तों पर कभी अपनी टीम को रास्ता भटकने नहीं देता।

इस ग्रेनेड की वजह से पुलिस को कुछ पलों के लिए रुकना पड़ा और इस रुकावट से राजू और गंगा को भागने के लिए थोड़ा और वक्त मिल गया था। पुलिस पार्टी से उनकी दूरी कुछ और बढ़ गयी। दोनों को लगा कि अगर वह पहाड़ी की ढलान तक पहुँच गये तो वहाँ से नीचे कूद कर बच सकते हैं। ढलान के खत्म होने के साथ एक बड़ा नाला था और उसके साथ ही घने जंगलों वाला हिस्सा शुरू होता। इस इलाके में घुसते ही माओवादियों को पकड़ना मुश्किल था लेकिन संचित चौधरी ने भी आज कोई छोटी मोटी प्लानिंग नहीं की थी। नाले से ठीक पहले सादी वरदी में संचित के पांच सबसे ट्रेंड और जेहादी जवान इन माओवादियों का इन्तज़ार कर रहे थे। इन जवानों ने राजू और गंगा को आते देखा और उनके पास आते ही फायरिंग शुरू कर दी।

धांय... धांय... धांय... धांय...

पहली गोली गंगा के पैर पर लगी। बाकी तीन अपना निशाना चूक गईं। उसने वापस भाग कर ढलान के बाईं ओर उतरना शुरू किया। उधर राजू को अब भी भरोसा था कि वह नाले के पार कूद जायेगा। उसने पहाड़ी से नीचे एक लम्बी छलांग लगाई और नाले के एक छोर पर आ गया।

पहाड़ी के ढलान के बाईं ओर अंसारी पहले ही उतर चुका था और उसने अपनी ए.के. 47 के साथ एक पेड़ के पीछे पोजीशन ले ली। वह गंगा को अपनी ओर आता देख रहा था। उसने गंगा को चेतावनी देने के लिए एक गोली चलाई। गंगा जैसे ही ठिठका, अंसारी ने देखा कि इंस्पेक्टर शुक्ला कांस्टेबल कन्नू और तीन जवानों के साथ इस माओवादी से दो सौ मीटर दूर पहुँच चुका है।

घायल गंगा अब घिर चुका था।

उधर अप्पल राजू के पीछे पीछे पुलिस के पाँच जवानों के अलावा एसपी संचित चौधरी भी अपनी टीम के कुछ जवानों के साथ आ गया। राजू पर अंधाधुंध फायरिंग हो रही थी। वह नाले के पार कूदा लेकिन तब तक उसे भी दो गोलियाँ लग चुकीं थीं। एक पैर पर और दूसरी कंधे पर।

वह नीचे गिर गया। थोड़ी ही देर में हथियारबन्द पुलिस वाले उसके चारों ओर थे।

26 जून 1998

1

ढम... ढम... ढम... ढम
रेला... रेला... रेला... रेला...
ढम... ढम... ढम ढम...

दक्षिण बस्तर में दूर किसी गाँव से आती यह आवाज़ गोंडी गीत संगीत की पहचान थी। ढोल नगाड़ों के बजने की आवाज़ किसी आयोजन का संकेत।

बस्तर के गाँवों में ऐसे आयोजन अक्सर सूरज ढलने के बाद शुरू होते और देर रात तक चलते जिसमें गोंड आदिवासी सब कुछ भूलकर गीत संगीत में खो जाते, लेकिन जून की तपती धूप में सुबह सवेरे होने वाला यह आयोजन कुछ अलग था। इसीलिए आदिवासियों की मौजमस्ती का वह रंग आज कुछ फीका लग रहा था। न वह उत्साह था, न वह लापरवाही और न वह मस्ती जो गोंडी गीत संगीत के ऐसे कार्यक्रमों में घुली होती है।

अरनपुर से करीब पन्द्रह किलोमीटर दूर ऊँचापाड़ा गाँव में एक अजीब सी हलचल थी। हवा में जैसे एक कौतूहल घुला था। गोंड आदिवासी यहाँ एक खुली जगह में घेरा बना कर बैठे थे। लोगों के आने का सिलसिला सुबह सात बजे से ही शुरू हो चुका था। पिछले दो घण्टे में कोई ढाई हज़ार लोग ऊँचापाड़ा में इकट्ठा हो चुके थे।

लड़कियों और लड़कों का एक समूह करीब आधे घण्टे से एक आदिवासी गीत की धुन पर थिरक रहा था। उनके पास ही ज़मीन पर बैठा एक बूढ़ा एक नगाड़े को पीट रहा था जबकि अधेड़ उम्र का एक दूसरा आदमी नाचते गाते लड़के-लड़कियों के बीच झूमते हुए ढोल बजा रहा था। गोंडी गीत संगीत की मस्ती से अधिक उस पर महुआ का नशा छाया था। वह इस जनसमूह के उन बहुत थोड़े लोगों में था जो आज के आयोजन में आदिवासी अल्हड़पन और मस्तमौला अन्दाज़ में शामिल थे वरना बाकी तकरीबन सभी चेहरों से मौज मस्ती के वह भाव गायब थे जो अक्सर ऐसे आयोजनों के दौरान दिखते।

एक ऊँची पहाड़ी पर बसे होने की वजह से शायद इस गाँव का नाम ऊँचापाड़ा पड़ा होगा। दन्तेवाड़ा से करीब सौ किलोमीटर दूर बसा ऊँचापाड़ा दक्षिण बस्तर का एक बहुत अन्दरूनी गाँव है। इसके सबसे करीब बसी जानी पहचानी जगह है अरनपुर, जो दन्तेवाड़ा से करीब पैंसठ किलोमीटर की दूरी पर है। अरनपुर के एक ओर है समेली गाँव है और दूसरी ओर जगरगुंडा। यहाँ तक पहुँचने के दो मुख्य रास्ते हैं - पहला दन्तेवाड़ा से पालनार और नकुलनार होते हुए समेली के रास्ते या फिर दूसरी ओर बसे गाँव दोरनापाल से होते हुए जहाँ रास्ते में चिन्तागुफा, चिन्तलनार और जगरगुंडा जैसी जगहों को पार करना पड़ता है।

पिछले कई सालों तक ये सारे गाँव दक्षिण बस्तर में आदिवासी कला और संस्कृति के घर बने रहे। दोरनापाल, जगरगुंडा और अरनपुर में तो बड़े बड़े बाज़ार लगा करते थे, जहाँ लोग दूर दूर से आया करते। पिछले कुछ वक्त से भले ही इन बाज़ारों में रुपए-पैसे का चलन शुरू हो गया हो, लेकिन अधिकतर आदिवासी अब भी सामान की अदला बदली ही किया करते। कोई

महुआ के बदले कपड़े ले जाता। कोई मुर्गियों को देकर अनाज खरीदता। कोई जंगल उत्पादों के बदले बर्तन या फिर तेल, मसाले और ज़रूरत का दूसरा सामान। हिन्दुस्तान के इस एक बहुत बड़े हिस्से में अब तक न तो रुपये पैसे की चमक-दमक पहुँची थी न ही शहरी छल-कपट की छाया।

देश को आज़ाद हुए भले पचास साल हो गये हों, लेकिन बस्तर के इन गाँवों में सरकार नदारद थी। दिल्ली, मुम्बई, भोपाल और जमशेदपुर जैसे शहरों में रहने वालों के लिए मध्य भारत के इस बहुत बड़े हिस्से का जैसे कोई वजूद ही नहीं था।

नेताओं ने यहाँ आने की जेहमत कभी नहीं उठाई।

सरकार ने इसकी ज़रूरत ही नहीं समझी !

यहाँ इस खालीपन को भरने का काम माओवादियों ने किया। पहले 1960 और 1970 के दशक में पश्चिम बंगाल में उग्र वामपन्थी विचारधारा से प्रभावित नक्सलबाड़ी आन्दोलन तेज़ी से पनपा। इस आन्दोलन को चलाने वाली पार्टी सीपीआई (एमएल) थी जो 1967 में सीपीआई (एम) से टूटकर बनी थी। नक्सलबाड़ी आन्दोलन को दबा दिया गया लेकिन देश के कई हिस्सों में चरमपन्थी वाम सोच जड़ें जमा चुकी थी। उग्र वामपन्थी पार्टी के भीतर भी वैचारिक टकराव था और इसीलिये सीपीआई (एमएल) के कई टुकड़े हो गये। इनमें से प्रमुख रहे – सीपीआई (एमएल-पीयू), माओवादी कम्युनिस्ट सेण्टर यानी एमसीसी और पीपुल्स वॉर ग्रुप यानी पीडब्लूजी जिसे माओवादियों की बोलचाल में अक्सर पीपुल्स वॉर कहा जाता है। पहले दो संगठन (पीयू और एमसीसी) उत्तर भारत में सक्रिय रहे जबकि पीपुल्स वॉर मुख्य रूप से आंध्र प्रदेश में पार्टी की गतिविधियाँ चलाता रहा। बस्तर में भी आज पीपुल्स वॉर के ही माओवादी थे।

आंध्र प्रदेश की सीमा से लगे होने के कारण पीपुल्स वॉर के कॉमरेड दण्डकारण्य को अपना हेडक्वार्टर बनाने की सोचने लगे। बस्तर के यह घने जंगल माओवादियों की गुरिल्ला रणनीति के लिए बिल्कुल माकूल थे। 1980 के दशक की शुरुआत में छोटे- छोटे गुटों में माओवादी बस्तर में दाख़िल हुए और गाँव वालों के साथ मीटिंग शुरू कीं। यह वह दौर था जब बस्तर में जंगलात के लोगों और पुलिसवालों की ही मनमानी चलती। आदिवासियों को उनके बंधुवा मज़दूरों की तरह रहना पड़ता। ख़ासतौर से फॉरेस्ट गार्ड तो वनवासियों के लिए सबसे डरावना नाम था। उनके शोषण के लिए यही सबसे अधिक ज़िम्मेदार थे। न तो जंगल में पैदा होने वाली किसी चीज़ पर गाँव वालों का हक़ होता न ही उनकी मज़दूरी उन्हें दी जाती। आदिवासियों के भीतर हताशा और कमज़ोरी का भाव बहुत गहरा था।

ऐसे में माओवादियों ने दक्षिण बस्तर को अपनी प्रयोगशाला बनाना शुरू किया। घने जंगलों से पटी इस ज़मीन को लिबरेटेड ज़ोन बनाने का प्रयोग हिन्दुस्तान के इतिहास में नया अध्याय लिखने जा रहा था।

सुबह 10.30 बजे

ऊँचापाड़ा में आज एक जन अदालत होनी थी। माओवादियों की जन अदालत।

यह जन अदालत उस जनताना सरकार का एक हिस्सा थी जो माओवादियों ने पिछले कुछ सालों में दक्षिण बस्तर के कुछ हिस्सों में कायम की थी। इसी जन अदालत में आरोपियों पर

मुकदमे चलते और नक्सली इंसाफ़ किया करते।

ऊँचापाड़ा में अब नाच गाने का कार्यक्रम अपने अन्तिम दौर में था। आसपास के दो दर्जन गाँवों के करीब चार हज़ार लोग इस गाँव में इकट्ठा हो चुके थे। भीड़ में हथियारबन्द माओवादियों की मौजूदगी साफ़ दिखती। गोंडी भाषा में छोटे भाई को तम्मुर कहा जाता है और बड़े भाई को दादा। मध्य भारत के इस इलाके में माओवादियों के सभी नेता दादा कहलाते।

नाच गाना थमा तो पार्टी के एक सदस्य ने हथियारों को दिखाना शुरू किया। पहले आदिवासियों के पारम्परिक हथियार जैसे तीर-कमान, कुल्हाड़ी और भालों का प्रदर्शन हुआ। इसके बाद पिछले कुछ सालों में पुलिस और सुरक्षा बलों से लूटे गये हथियार दिखाए गये, जिनमें सामान्य बन्दूकों के अलावा आधुनिक ए.के. 47 और पुरानी पड़ चुकी इन्सास राइफल शामिल थीं। नाच गाने के बाद हथियारों का प्रदर्शन जन अदालत से पहले अक्सर किया जाता। जब ये हथियार दिखाए जा रहे थे तभी एक माओवादी कमाण्डर बोलने के लिए खड़ा हुआ।

उसके खड़े होने के साथ ही एक काडर ने नारा लगाना शुरू किया।

'कॉमरेड बीरम राव को लाल सलाम।'

बाकी लोगों की आवाज़ आयी – 'लाल सलाम... लाल सलाम...'

नारे थमे तो बीरम राव ने बोलना शुरू किया। उसके कंधे पर एक ए. के. 47 टंगी थी और कमर पर कारतूसों की बेल्ट के साथ एक पिस्तौल भी बँधी थी।

'जोहा...आ...र...,' बीरम राव ने ज़ोर से कहा।

जवाब में गाँव वालों की आवाज़ आयी, 'जोहार... जोहार।'

'साथियों, पिछले कुछ वक्त से उद्योगपतियों के पैसे से चलने वाली सरकार और बुर्जुआ शासक दल का अत्याचार लगातार बढ़ रहा है। मज़दूरों का दमन हो रहा है। खेती करने वाले किसानों के ख़िलाफ़ नीतियाँ बन रही हैं। खान में काम करने वाले मज़दूरों से जानवरों की तरह काम लिया जा रहा है। सारा पैसा मालिकों के पास जा रहा है। दिन रात कमरतोड़ मेहनत करने वाले किसान-मज़दूर और उसके परिवार को कुछ नहीं मिल रहा है। सरकार गरीबों का ख़ून चूस रही है और पुलिस हम पर गोली चलाती है।'

किसी भी जन अदालत से पहले माओवादी कमाण्डर इस तरह का लम्बा भाषण देते। उसमें यही बातें दोहराई जाती कि गरीब की ज़मीन लुट रही है और अमीर हर रोज़ मालामाल हो रहा है। सरकारी दमन और शोषण के शिकार आदिवासियों को ये बातें अच्छी लगती जिन्होंने यहाँ कभी सरकार या अपने नेता को नहीं देखा।

'हमारी पार्टी और सारे कॉमरेड आज शासक वर्ग के इसी अत्याचार के ख़िलाफ़ खड़े हैं और लड़ रहे हैं। देश की जनता भी धीरे धीरे शासकों के ख़िलाफ़ खड़ी हो रही है और पार्टी से जुड़ती जा रही है। इसी का नतीजा है यह जनताना सरकार। साथियों... जल्द ही यह जनताना सरकार देश भर में फैलेगी, क्रान्ति होगी और हम लोग दिल्ली के लालकिले में लाल झण्डा फहराएंगे। संसद कहे जाने वाले उस सूअरों के बाड़े को हम ख़त्म कर देंगे और पूरे देश में सही मायनों में जनता की सरकार बनेगी।'

बीरम राव के इस ऐलान के साथ ही फिर नारे लगने लगे। 'कॉमरेड बीरम राव को लाल सलाम।'

‘लाल सलाम... लाल सलाम...’ काडर ने नारा लगाना शुरू किया।

वैसे चरमपन्थी वामपन्थियों ने सत्तर के दशक में ही नक्सलबाड़ी आन्दोलन के वक्त ‘लाल किले पर लाल निशान’ का नारा दिया था लेकिन अभी तक वह क्रान्ति आयी नहीं थी। देश के शहरी इलाकों में माओवादी विचारधारा के समर्थक बहुत सीमित थे और पार्टी को जितना भी समर्थन था, वह वैचारिक स्तर तक ही सीमित था। इसके बावजूद माओवादी ख़ुद को ये दिलासा देते रहे कि जनता क्रान्ति के लिए तैयार हो रही है।

इस बदलाव में भले ही वक्त लगे, देरसबेर क्रान्ति ज़रूर होगी।

बीरम राव अक्सर अपने काडर को समझाता कि माओवादियों की पीएलजीए (पीपुल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी) एक दिन पीएलए (पीपुल्स लिबरेशन आर्मी) की शक्ल लेगी और हिन्दुस्तान में कम्युनिस्ट पार्टी की सरकार बनेगी।

माओवादियों की कम्युनिस्ट पार्टी की सरकार।

बीरम राव ने अब अपने कंधे पर टंगी ए. के. 47 को उतार कर नीचे रख दिया। वह फिर बोलने लगा।

‘जहाँ एक ओर पार्टी के कॉमरेड पूरे देश में जनताना सरकार बनाने और मज़दूरों के लाल झण्डे को हर जगह फहराने के लिए लड़ रहे हैं वहीं हमारे बीच के ही कुछ गद्दार शासक वर्ग से जुड़ गये हैं। ऐसे लोग मालिकों का जूता उठाने और तलुए चाटने पर भरोसा करते हैं। यही लोग हमारी क्रान्ति के रास्ते का सबसे बड़ा रोड़ा हैं। हमारे बीच रहकर ये लोग हमें ख़त्म करने के लिए काम कर रहे हैं। जनविरोधी सरकार की पुलिस के लिए मुख़बिरी कर रहे हैं और आज हम एक ऐसे ही मामले की निबटारे के लिए यहाँ इकट्ठा हुए हैं।’

बीरम राव के ऐसा कहते ही सब लोगों ने अपने बीच एक कौतूहल का वातावरण महसूस किया। एक सनसनी सी हर ओर फैल गयी।

‘साथियो आज इस जन अदालत में छुट्टेपाल गाँव के हेड़िया कुंजाम के बारे में पार्टी फ़ैसला करेगी। आप सब जन यह जानते हैं कि यहाँ जनताना सरकार है। जनता का राज चलता है यहाँ। ये पूंजीपतियों की सरकार नहीं है। किसी बुर्जुआ पार्टी का राज नहीं होते इधर। धीरे धीरे यही जनताना सरकार पूरे देश में फैलेगी। यहाँ जनता के कहने से फ़ैसला होता है। पार्टी का फ़ैसला जनता से पूछकर होता और आज जनता ही ये तय करेगी कि हेड़िया कुंजाम के साथ क्या होने चाहिए।’

नक्सलियों की जनअदालत में खड़ा हेड़िया कुंजाम यह सब सुन रहा था। उसका चेहरा भावशून्य था। मौत उसके सिर पर मंडरा रही थी लेकिन उसे देखकर यह नहीं लग रहा था कि उसे इस बात की कोई फिक्र थी कि उसका क्या होगा !

‘सब इस बात को जानते हैं कि पिछली 18 अप्रैल को काली पहाड़ी पर क्या हुआ। बड़ी संख्या में फोर्स सिविल ड्रेस में आया और उसने एम्बुश लगाया। हमारा दो सबसे भरोसेमन्द कॉमरेड अप्पल राजू और करतम गंगा को पुलिस धोखे से पकड़े। दोनों कॉमरेड इस इलाके में जनताना सरकार को मज़बूत कर रहे थे। गरीब जनता के लिए काम कर रहे थे। फिर भी बुर्जुआ शासक के लिए काम कर रही पुलिस ने हमारे दो कॉमरेडों को पकड़ा और दोनों जेल में हैं।’

बीरम राव जब यह सब बोल रहा था तो हेड़िया कुंजाम को भीड़ में अरनपुर का ही शंकर कोडोपी दिखा। हेड़िया ने देखा कि कोडोपी धीरे से उठकर बीरम राव के पास ही आकर ज़मीन पर बैठ चुका है। शंकर कोडोपी संगम सदस्य था - माओवादियों की सुरक्षा परत के सबसे बाहर का हिस्सा। संगम सदस्यों का काम पूरे इलाके में मुख़बिरी करना और किसी भी नये इंसान या गतिविधि को देखकर इसकी जानकारी तुरन्त इलाके के कमाण्डरों को देना होता। इस सभा में शंकर कोडोपी की मौजूदगी कोई असामान्य बात नहीं थी।

बीरम राव ने आगे बोलना शुरू किया।

'साथियो, कॉमरेड राजू और गंगा को गोलियाँ भी लगी हैं। वो बुरी तरह भी घायल हुए। इन दोनों को पुलिस नहीं पकड़ सकता था लेकिन उनके कालीपहाड़ी के पास होने की जानकारी पुलिस को पहले ही दी गयी। कुछ लोगों को इस बात का पता था कि हमारे कॉमरेड काली पहाड़ी पर तेन्दूपत्ता के कुछ ठेकेदारों से लेवी वसूलने जाते हैं। इस बारे में पुलिस को जानकारी किसने दिया? क्या पुलिस बिना जानकारी मिले इतनी बड़ी योजना बन सकते थे? क्या बिना जानकारी के पुलिस वाले इतना बड़ा जाल बिछा सकते थे?'

हर ओर सन्नाटा छा गया। बीरम राव काफी देर तक हेड़िया को घूरता रहा। हेड़िया ने बीरम राव से आँखें मिलाईं और बिना डरे उसकी ओर देखता रहा।

हेड़िया कुंजाम अरनपुर और जगरगुंडा के बीच छुट्टेपाल गाँव में एक प्राइमरी स्कूल में टीचर था। वह माओवादियों की सोच और तानाशाही के ख़िलाफ़ था। बन्दूक या हिंसा से उसे नफ़रत थी। इसीलिये लम्बे वक्त से वह नक्सलियों की आँखों की किरकिरी बना रहा।

क्या माओवादियों ने इस बड़ी पुलिस कार्रवाई में उसका नाम घसीट कर उसे रास्ते से हटाने का तरीका ढूँढ लिया है? ये बात हेड़िया के दिमाग में आयी लेकिन उसने इस विचार को खुद पर हावी नहीं होने दिया। किसी के पास इस बात का सुबूत नहीं था कि उसने ही पुलिस को राजू और गंगा के काली पहाड़ी पर होने की बात बताई। लेकिन जन अदालत में इस बात को साबित किया जाना था कि उसने ही मुख़बिरी की।

बीरम राव ने फिर बोलना शुरू किया।

'पुलिस को ऐसा पता चला कि हमारे दो कॉमरेड वहाँ होंगे और यह जानकारी हेड़िया कुंजाम ने पुलिस को दी,' यह कहते हुए बीरम राव का सुर थोड़ा अधिक गम्भीर हो गया। वह लोगों के चेहरों को टटोलने लगा।

नक्सली उसे नापसन्द करते हैं, यह बात हेड़िया भी जानता था। लेकिन उसकी ताक़त ही थी उसका बिन्दास स्वभाव। वह बिल्कुल निडर था।

'मेरे ख़िलाफ़ जो आरोप लगाया जा रहा है उसका सुबूत क्या है?' हेड़िया ने पूछा।

यहाँ बैठे लोगों को हेड़िया से इस ऊँचे सुर की अपेक्षा नहीं थी। कोई भी बीरम राव के सामने इतनी लापरवाही से नहीं बोल सकता था। लेकिन हेड़िया की यही आदत थी जो नक्सलियों को खटकती थी। माओवादी ऐसे लोगों को पसन्द नहीं करते जो उनसे डरते या दबते न हों।

'मैं ऐसी किसी जन अदालत को नहीं मानता क्योंकि ये अदालत नहीं, मनमानी करने का बहाना है। फिर भी मैं पूछता हूँ क्या सुबूत है कि मैंने पुलिस को आपके दो साथियों की काली पहाड़ी पर मौजूदगी के बारे में बताया?'

बीरम राव ने जवाब दिया, 'ये बताने की ज़रूरत नहीं कि इस जन अदालत में हम क्या करते हैं। सब जन जानते हैं कि सुबूत और गवाह से ही यहाँ फ़ैसला होता है और जनता की राय से ही सज़ा होती है।'

बीरम राव ने शंकर कोडोपी की ओर देखा। वह बोलने के लिए खड़ा हुआ। '16 अप्रैल की सुबह हेड़िया तेन्दूपत्ता ठेकेदारों के साथ जीप में अरनपुर गया था। उसी दिन शाम को हेड़िया मुझे अरनपुर थाने में भी दिखाई दिया।'

शंकर कोडोपी ने ऐसा कहते हुए हेड़िया से आँखें नहीं मिलाई। न ही उसने जनता की ओर देखा। उसने ये बयान बीरम राव की ओर देखकर दिया और फिर संगम सदस्यों की ओर देखते हुए नज़रें झुकाकर खड़ा हो गया।

'ओह्हो... तो ये बात है,' हेड़िया कुंजाम बुदबुदाया। उसे याद आ गया कि उस दिन क्या हुआ था और उसे किस तरह जाल में फँसाया जा रहा है।

शंकर कोडोपी का इससे अच्छा इस्तेमाल हो भी नहीं सकता। कुत्ता साला। हेड़िया ने मन ही मन सोचा और फिर बोला, 'एक दिन पहले मैंने अपनी मोटरसाइकिल मरम्मत के लिए सूर्या मैकेनिक के पास छोड़ी थी। अगले दिन सुबह जब मैं उसे लेने जा रहा था तो उस ओर जा रहे तेन्दूपत्ता के कुछ ठेकेदारों ने मुझे अपनी जीप में बिठा लिया। इससे ये कैसे साबित होता है कि मैंने पुलिस को राजू और गंगा के बारे में बताया?'

बीरम राव ने देखा कि जन अदालत में पहली बार कोई आदमी घबरा कर खुद को बेकुसूर बताने की बजाय बहस कर रहा है। जन अदालत में आरोप लगने के बाद लोग हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाते हैं और खुद को छोड़ने की बात करते हैं। लेकिन हेड़िया खुद पर लगे आरोपों को सख़्ती से नकार रहा था और झूठा साबित कर रहा था।

'हमारे कॉमरेडों पर हुए हमले के दो दिन पहले तुम तेन्दूपत्ता ठेकेदारों से मिले थे और उसी दिन पुलिस थाने में भी दिखे। शंकर भी उसी जीप में था जिसमें ठेकेदार उमर सिंह ने तुम्हें बिठाया। उमर सिंह ने तुम्हें ये बताया कि कुछ ठेकेदारों के साथ वो 18 तारीख़ को काली पहाड़ी पर आने वाला है। क्या ये सच नहीं है?' बीरम राव ने पूछा।

'ये बिल्कुल झूठ है। ठेकेदार उमर सिंह से मेरी इस बारे में कोई बात नहीं हुई।'

बीरम राव ने फिर शंकर कोडोपी की ओर देखा।

'मैंने जीप में सुना था। ठेकेदार उमर सिंह ने दो दिन बाद काली पहाड़ी पर आने की बात कही थी और ये भी कहा कि दादा लोगों से उसकी मुलाकात होनी है।' शंकर कोडोपी सरासर झूठी गवाही दे रहा था।

'तो तुम्हें मालूम था कि काली पहाड़ी पर हमारे कॉमरेड तेन्दूपत्ता ठेकेदारों से मिल रहे हैं और पुलिस को उस दिन तुमने ही ये जानकारी दी,' बीरम राव ने फ़ैसला सुनाने के अन्दाज़ में कहा।

'मैं अपनी मोटरसाइकिल लेने अरनपुर गया था। सूर्या मैकेनिक थाने के बिल्कुल बगल में काम करता है। मेरी मुलाकात इंस्पेक्टर शुक्ला से हुई। उसने मुझसे स्कूल के बारे में पूछताछ की। काली पहाड़ी पर राजू और गंगा के आने की बात न तो मुझे पता थी न मैंने किसी तेन्दूपत्ता ठेकेदार के बारे में पुलिस के बताया।'

'चुप रहो,' बीरम राव चिल्लाया। 'सबने सुना कि शंकर कोडोपी ने क्या कहा। वह हमारा भरोसेमन्द साथी है। गलत नहीं बोल सकता।'

हेड़िया समझ गया कि माओवादी इस जन अदालत में उसकी बात सुनने के लिए तैयार नहीं हैं।

2

ऊँचापाड़ा से कोई बीस किलोमीटर दूर चिट्टापाड़ा के जंगलों में सुबह से ही भीमे महुआ बटोरने में लगी थी। उसके साथ उसी के गाँव का रामदेव भी था। रामदेव भीमे के बचपन का साथी था। दोनों अरनपुर में पले बढ़े और अक्सर साथ साथ ही रहे थे। रामदेव सत्रह साल की भीमे से चार साल बड़ा था, और अक्सर उसे छेड़ा करता। छुटपन में जब भीमे पेड़ पर नहीं चढ़ पाती तो रामदेव दरख़्त पर चढ़ कर उसे चिढ़ाया करता। वह उसे जी भर कर परेशान करता, लेकिन प्यार जताने का कोई मौका भी न चूकता। उसके लिए जंगली फल बटोरने से लेकर हर हफ़्ते लगने वाले हाट से खिलौने, कंगन, चूड़ियाँ और कुछ भी ले आता।

अब धीरे धीरे भीमे का यौवन उमड़ रहा था। पिछले दो सालों में वह काफी बदल गयी थी। उसकी जितनी उम्र थी, वह उससे कहीं अधिक बड़ी दिखाई देती। भीमे अब किशोरी से अधिक एक युवती लगने लगी थी। सांवला रंग, शक्लो सूरत बेहद मनमोहक। बड़ी बड़ी आँखें, चौड़ा माथा, गालों से उतरते हुए ठोड़ी तक आते आते उसका चेहरा करीब करीब एक त्रिभुजाकार संरचना बनाता जिसके बीच में उसकी नाक और उसमें टंगी बाली उसे आदिवासी पहचान देते। उसने नीले रंग की एक छोटी कुर्तानुमा कमीज़ और कमर के नीचे घिसड़ी* पहनी हुई थी। कमीज़ भीमे की कमर से पहले ही ख़त्म हो जाती और घिसड़ी भीमे के घुटनों तक थी। भीमे के गले में चाँदी का हारनुमा आभूषण था और पैरों में पायल बँधी थी।

रामदेव के दिल में भीमे के लिए आकर्षण हर रोज बढ़ रहा था। वह भीमे को बड़े गौर से देखा करता और उसमें आ रहे बदलावों को गहराई से महसूस करता। भीमे महुआ बटोरने के लिए झुकती तो रामदेव उसकी ओर देखने का लालच रोक न पाता। उसके दिल में भीमे के लिए प्यार घुलता चला गया था। इक्कीस साल की उम्र में उसका प्यार सम्भोग की चाह में और भी तड़प पैदा करता। वह इस लड़की की चाल में एक नशा महसूस करता। भीमे जब उसकी ओर आती को वह उसके चेहरे के साथ उसकी छातियों को निहारता और उसके दिल में कई हिलोरें एक साथ उठतीं। एक मादकता उसे घेर लेती। रामदेव की नज़रें छुप-छुपकर भीमे के शरीर का मुआयना करतीं। वह कभी भीमे के चेहरे को देखता, तो कभी उसकी गर्दन को। कभी छाती को देखता, तो कभी पैरों को और कभी उसके अधनंगे पेट को देखता। रामदेव के भीतर अभी प्यार की इच्छा उफान पर थी। वह उसे बाँहों में लेकर चूमना चाहता था। आज उसके दिल में इससे भी कहीं अधिक आगे जाने का लालच था।

रामदेव के दिल में जब प्यार और मिलन की तीव्र इच्छा उफान पर होती तो उसकी ज़ुबान थम जाती। वह बोलना भूल जाता। मर्द अक्सर प्यार के अन्तरंग क्षणों में चुप हो जाते हैं। महिलाएं मुखर होकर प्यार करना पसन्द करती हैं। भीमे अपने प्रेमी के इन भावों को अच्छी तरह समझती थी।

बस्तर के कुछ आदिवासी इलाकों में अभी भी घोटुल परम्परा ज़िन्दा है जहाँ आदिवासी किशोर और युवा एक साथ शिक्षा, संस्कृति और समाज के बारे में बहुत कुछ सीखते हैं। लड़के और लड़कियाँ दोनों। यहाँ पर लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं होता। विवाह से पहले जवान लड़के लड़कियाँ एक दूसरे के साथ लम्बा वक्त भी गुज़ारा करते हैं। जोड़े न केवल एक दूसरे को जानते समझते हैं बल्कि प्यार के अन्तरंग पलों तक जाते हैं। शायद सेक्स के वक्त एक दूसरे को सन्तुष्ट करने की क्षमता और चाहत का अन्दाज़ा लगाने के लिए। आदिवासी समाज का ऐसा खुलापन अब भी महानगरों में वर्जनाओं में गिना जाता है !

भीमे के लिए रामदेव की इच्छा को जानना कठिन न था। प्यार उसके दिल में भी बेपनाह था। उसे रामदेव पर पूरा भरोसा भी था लेकिन अब तक वह उसे अपने करीब आने से रोकती रही थी। प्यार की बातें करते हुए रामदेव उसकी बाँहों, चेहरे, बालों और कमर को कभी कभार छू लेता। लेकिन भरपूर आलिंगन और चुम्बन जैसी प्रेमक्रियाओं को उसने रोक रखा था। उसने अपने प्रेमी को बहकने से रोकने के लिए इस प्रेम में अनुशासन की एक दीवार-सी खड़ी कर दी थी।

लेकिन आज प्यार की तड़प भीमे के दिल में भी प्रबल थी। वह रामदेव को प्यार करना चाहती थी। प्रेमी की आँखों से टपकता अनुराग उसके दिल के दरवाज़े खटखटा रहा था। रामदेव की प्रेम अनुक्रियाएँ भीमे के दिल के बन्द दरवाज़े से रिस कर पानी की तरह भीतर प्रवेश करने लगी थी। भीमे ने महुआ की टोकरी नीचे रखी और रामदेव के पास आ गयी।

रामदेव उसे देखता रहा। चुपचाप। चाहत भरी नज़रों में सवाल साफ़ सुनाई दे रहे थे।

'बाता'?** भीमे ने झुककर पूरी मासूमियत के साथ पूछा।

इस शब्द को कहते हुए जिस तरह भीमे के होंठ खुले उससे रामदेव के दिल में चाहत का एक ज्वालामुखी फट पड़ा। यह एक शब्द जैसे उसके लिए प्रेम का सागर समेटे था। अब तक भीमे के प्रतिरोध के डर से संकोच करने वाले रामदेव के लिए यह खुला आमन्त्रण था। उसने एक झटके में भीमे का हाथ पकड़कर उसे अपने पास खींच लिया। भीमे अब रामदेव के मज़बूत आलिंगन में थी। न रामदेव उसे छोड़ना चाहता और न वह उससे अलग होने की कोई कोशिश कर रही थी।

3

'हेड़िया कुंजाम ने न केवल पार्टी के दो कॉमरेडों को फँसाया है बल्कि उसने जनताना सरकार के ख़िलाफ़ झण्डा बुलन्द किया है। उसने यह साबित कर दिया है कि वह गद्दार है और दुश्मन के साथ है। ऐसे गद्दार को इस अदालत में मौत की सजा सुनाई जाती है। अगर किसी को इस फ़ैसले पर कोई एतराज़ हो या वो इस सज़ा को कम करने या बदलने की बात कहना चाहता हो तो इस जन अदालत में बोल सकता है। हेड़िया कुंजाम को भी हक है कि वो अपनी ग़लती स्वीकार कर माफ़ी माँग सकता है जिस पर यह जन अदालत विचार करेगी।'

पूरी सभा में सन्नाटा छा गया।

हेड़िया के चेहरे पर अब भी डर का कोई भाव नहीं था। वह आज़ाद ख़यालों वाला था और पागलपन की हद तक निडर था। उसे शुरुआत से ही इस बात का अन्दाज़ा था कि उसके

साथ क्या होने जा रहा है लेकिन वह माओवादियों के सामने किसी भी हाल में आत्मसमर्पण करना नहीं चाहता था।

'कॉमरेड बीरम राव। इन गाँवों में लोग आपको दादा कहते हैं। आपके हर फ़रमान को मानते हैं लेकिन न तो मैं इस जन अदालत को सही मानता हूँ और न ही मुझ पर लगाए गये आरोप सही है। मैंने पुलिस के लिए कोई मुख़बिरी नहीं की है लेकिन यह भी सच है कि गाँवों में जनताना सरकार के नाम से चल रहे तन्त्र की कई बातों को मैं नहीं मानता।'

हेड़िया कुंजाम चाहता था कि सरकार की दमनकारी नीतियों का विरोध जनआन्दोलन से हो न कि बन्दूक के रास्ते। उसे लगता था कि जनता की लड़ाई सड़क, अस्पताल और स्कूल को बनाने को लेकर होनी चाहिए न कि देश की संसद को 'सूअरों का बाड़ा' कह कर। वह अक्सर कहा करता कि बन्दूकधारी क्रान्ति लाने की बड़ी बड़ी बातें करके कुछ हासिल नहीं होगा। आज भी वह यही कह रहा था।

'जो रास्ता जनताना सरकार चलाने वाली आपकी पार्टी का है उससे इन लोगों का कुछ भला नहीं होने वाला। ऐसा तो मैं बार बार कहता रहा हूँ। अगर यह पार्टी को पसन्द नहीं हैं तो मैं क्या कर सकता हूँ?' हेड़िया कुंजाम ने कहा।

बीरम राव कुछ कहता उससे पहले हेड़िया ने उसे चुप रहने को हाथ खड़ा किया।

'मैं किस बात के लिए माफ़ी माँगू कॉमरेड? जो काम मैंने किया ही नहीं उसके लिए माफ़ी ! मैं जानता हूँ मेरे झुकने से इस जनता पर तुम्हारा दबदबा बढ़ेगा। तुम अपनी जनताना सरकार को अधिक सही साबित कर सकोगे। ऐसी जन अदालतों के फ़ैसले अपनाने के लिए गाँववालों पर दबाव बढ़ेगा। यही चाहते हो न तुम कॉमरेड।'

बीरम राव के होश उड़े हुए थे। माओवादियों की हिरासत में होने के बावजूद इस आदमी को मौत को कोई डर नहीं था।

'कॉमरेड इस जनअदालत को लोगों के बीच सही साबित करने के लिए तुम सबसे राय माँग रहे हो। लेकिन जो तुम्हारी एक भी गलत बात के ख़िलाफ़ आवाज़ नहीं उठा पाते, वे लोग तुम्हारे फ़ैसले के ख़िलाफ़ क्या बोलेंगे दादा बीरम राव? इन लोगों को यहाँ बिठा कर तुम इसे जन अदालत कह रहे हो? ये अदालत ही बिल्कुल ग़लत है। अगर आज मुझे मारा गया तो ये एक और हत्या ही होगी। इससे अधिक मुझे और कुछ नहीं कहना है।'

माओवादियों का विरोध करते हुए हेड़िया कुंजाम ने अपनी मौत का रास्ता तैयार कर लिया था।

बीरम राव ने हवा में गोली चलाई।

सभा में बैठे लोगों के दिल तेज़ी से धड़कने लगे।

'हेड़िया कुंजाम ! ये जन अदालत है ! जन अदालत !' वह चिल्लाया। 'यहाँ बस अपना बात बोलो। भाषण मत दो। आरोप साबित हो चुका तुम्हारा और जो तुम बोल रहे उससे पता चलता कि तुम जनताना सरकार से कितनी नफ़रत करते हो। तुम बुर्जुआ मालिकों के, पुलिस के, सरकार के गुलाम हो। और कुछ नहीं। तुम्हें इस अदालत में सज़ा ज़रूर मिलेगा।'

हेड़िया जानता था कि बोलने का फ़ायदा नहीं, लेकिन वह अपनी मौत को बिना लड़े गले नहीं लगाना चाहता था। यहाँ से भागना मुमकिन नहीं था और लड़ना ही उसके लिए एक रास्ता था।

‘तो तुमने तय किया है कि तुम हिरासत में एक और हत्या करोगे कॉमरेड। यही है जनताना सरकार? यही है पार्टी की जन अदालत?’

‘हिरासत में मारना तुम्हारी पुलिस का काम है। बिना मुकदमा चलाये जेलों में बन्द रखना, पुलिस लॉक-अप में टॉर्चर करना। हम यहाँ उन्हीं लोगों को सज़ा देते हैं जो गुनहगार हों और ख़ुद को बदलने के लिए तैयार नहीं। तुम्हारा दोष साबित हो गया है और तुम्हारी बातों से साफ़ है कि तुम्हें अपने किये का अफ़सोस नहीं। रास्ता नहीं बदलना चाहते तुम। हेड़िया तुम जनताना सरकार और इस अदालत के साथ भी नहीं दिखते। तुम्हारा मरना ही लोगों के लिए ज़रूरी है हेड़िया कुंजाम।’

हेड़िया कुंजाम चुप रहा। उसने लोगों की ओर देखा। सबकी जुबान को काठ मार गया था। जैसे मुख्यधारा के लोकतन्त्र में शासक तभी तक लोकशाही पसन्द करते हैं जब तक वह सत्ता में बैठे लोगों पर सवाल न उठाये वैसे ही नक्सलियों की जनताना सरकार का लोकतन्त्र था। यहाँ क्रान्तिकारियों को भी अपने चारों ओर चापलूसों की ही ज़रूरत थी। हेड़िया जैसे लोग क्रान्ति के लिए ख़तरा थे।

‘साथियो सब जन ने ये देख लिया कि हेड़िया ने मुख़बिरी की। हमारा कॉमरेड राजू और गंगा को फँसाया। वो न तो माफ़ी माँगने को तैयार है और न ही उसे हमारी जनताना सरकार से कोई वफ़ादारी है। वह हमसे नफ़रत करता है। जनता की सरकार उसे पसन्द नहीं। असल में हेड़िया इस अदालत में पुलिस की तरफदारी कर रहा है। उसे मौत की सज़ा दी जायेगी। क्या किसी को इस पर कुछ कहना है?’

कोई नहीं बोला। एक मुर्दा सन्नाटा चारों ओर छा गया।

‘क्या किसी को इस पर कुछ कहना है?’ बीरम राव चिल्लाया जैसे वह लोगों से पूछ नहीं रहा बल्कि उन्हें चुनौती दे रहा हो। ‘इस जनअदालत में हेड़िया कुंजाम के बचाव में बोलने के लिए किसी के पास कुछ हो तो वह आगे आकर बोल सकता है।’

जवाब में कोई आवाज़ नहीं आयी। हेड़िया कुंजाम एक व्यंग्य भरी हारी हुई मुस्कान के साथ आसमान की ओर देखने लगा।

4

‘भीमे... भीमे...भीमे... कहाँ हो?’

अपना नाम सुनकर भीमे चौंक गयी। वह अब तक रामदेव की बाँहों में ही थी। हड़बड़ा कर उठी और अपने कपड़े ठीक किये। फिर खड़े होकर दूर से आती आवाज़ की ओर देखने लगी।

चिट्टापाड़ा गाँव में ही रहने वाली उसकी सहेली सुरी दौड़ती हुई आ रही थी। भीमे उसे देखकर समझ गयी कि कुछ गड़बड़ ज़रूर है। उसने रामदेव को जगाया।

सुरी अब तक हाँफती हुई उसके पास पहुँच चुकी थी।

‘भीमे... भीमे... तेरा बाबो...’

सुरी के लिए अपनी बात पूरी करना मुमकिन नहीं था। उसकी साँस फूल रही थी।

‘क्या हुआ बाबो को?’

सुरी ने भीमे को बताना शुरू किया। ऊँचापाड़ा में अदालत की बात हर ओर फैल चुकी थी। हेड़िया को दी जा रही सज़ा से घबराकर सुरी करीब तीन किलोमीटर पैदल भागते हुए इस

जंगल में भीमे को यह बताने आयी थी।

भीमे हेड़िया कुंजाम की इकलौती सन्तान थी। पाँच साल की उम्र में भीमे की माँ चल बसी। तब से हेड़िया ने भीमे को बड़े प्यार से पाला और अपनी ही तरह निडर बनने को कहा था।

'बाबो ने ये बात मुझसे क्यों छुपाई? बाबो मुझे सब बताता है। उसने क्या इसीलिए मुझसे आज जल्दी ही महुआ बीनने के लिए जंगल में जाने को कहा?'

अक्सर माओवादी अपनी जनअदालत के बारे में कई दिन पहले बता देते ताकि ज़्यादा से ज़्यादा लोगों को पता चले और वह अदालत में आयें। लेकिन हेड़िया के मामले में दादा लोग काफी जल्दी में थे। हेड़िया भी नहीं चाहता था कि उसकी बेटी जन अदालत में आये। वह उसे माओवादियों से दूर रखना चाहता था।

'भीमे जल्दी चल... तेरे बाबो की जान ख़तरे में है। दादा लोग उसे सज़ा दे रहे हैं।'

पास खड़ा रामदेव अब तक सब कुछ समझ चुका था।

'यहाँ से ऊँचापाड़ा काफी दूर है भीमे। पैदल भागने में वक्त लगेगा,' रामदेव बोला।

'क्या करें?'

'ऐसा कर भीमे... तू सुरी के साथ छोटे रास्ते से ऊँचापाड़ा की ओर भाग। मैं गाँव से मोटरसाइकिल ले कर पीछे से आता हूँ। रास्ते में तुम्हें पकड़ लूँगा।'

'पर कौन तुम्हारी मदद करेगा?'

'कोई न कोई मदद ज़रूर करेगा... जा भाग भीमे... जल्दी कर...,' रामदेव चिल्लाया और ख़ुद गाँव की ओर दौड़ा।

रामदेव गोंड आदिवासी था। तेज़ तर्रार। ऐसी हालत में अक्सर लोगों के हाथ पाँव फूल जाते हैं। लेकिन रामदेव ने आज भीमे के साथ अपनी ज़िन्दगी का सबसे ख़ूबसूरत वक्त गुज़ारा था। उसके लिए उसका प्यार कई गुना बढ़ गया था। वह उसके लिए कुछ भी करने को तैयार था। चिट्टापाड़ा की ओर भागते हुए रास्ते में ही उसने एक गाँव वाले से मोटरसाइकिल का इन्तज़ाम कर लिया।

बीस मिनट बाद वह भीमे और सुरी के साथ ऊँचापाड़ा की ओर मोटरसाइकिल दौड़ा रहा था।

5

'बाबो बाबो...' भीमे भागती हुई हेड़िया के पास पहुँची।

'रामा देख... देख तो रामा... बाबो को क्या हुआ... बाबो तू ज़िन्दा है ना।?' भीमे चिल्ला रही थी।

रामदेव ने देखा कि हेड़िया कुंजाम के सिर और पेट से ख़ून बह रहा था। उसके पेट में दो गोलियों के निशान साफ़ दिख रहे थे लेकिन हेड़िया मरा नहीं था।

अपनी बेटी की आवाज़ सुनकर हेड़िया ने आँखें खोलीं।

'बाबो... तू ज़िन्दा है बाबो... रामा इसे उठा... हम इसे यहाँ से ले जाते हैं।' भीमे की आवाज़ में दिल चीरने वाला दर्द था। रामदेव जानता था कि हेड़िया को यहाँ से करीब दो सौ

किलोमीटर दूर जगदलपुर में ही कोई डॉक्टर देख सकता है। वहाँ तक पहुँचाने के लिए न कोई साधन था और न हेड़िया के पास वक्त बचा था।

हेड़िया ने अपनी बेटी को रोते देख उसे मना करने की मुद्रा में सिर हिलाया। उसकी आँखों से भी आँसू बह रहे थे। उसने बोलने की कोशिश की लेकिन उसकी आवाज़ टूट रही थी।

'भीमे मैं न...हीं... ब...चुंगा, बहु... त खू..न बह ग...या ले...कि... न तू ये जान ले कि मैं न तो ग...ल...त था न मैंने मु...ख...बिरी की... मेरी ह...त्या की है बीर...म र...आव और उसके साथियों ने...'

भीमे बहुत परेशान हो उठी। दाँतों से अपने होंठ दबाए उसने किसी तरह सिर हिलाया।

'बाबो... तूने मुझे... मुझे बताया नहीं ब...आ... बो... तू इधर देख... बाबो क्यों नहीं बताया मुझे?' भीमे ने पिता के सीने पर सिर रख दिया।

अब हेड़िया की साँसें भी टूटने लगीं थी। उसे मूर्छा आनी लगी। बस थोड़ा सा मुस्कुराया। बोलने की ताकत भी उसमें नहीं बची थी। उसने अपनी बेटी का हाथ पकड़ लिया बस।

भीमे ने अपना सिर उठाकर देखा... बाबो कुछ और कहना चाहता था लेकिन अचानक उसकी गर्दन एक ओर झुक गयी। हेड़िया की आँखें खुली रह गईं थीं।

'ब...आऽऽ...बो...' वह चिल्लाई। उसकी रुलाई से आसपास खड़े लोगों का कलेजा फट रहा था।

हेड़िया कुंजाम मर चुका था।

भीमे ने अपना सिर पिता के सीने पर रख दिया। अब इस दुनिया में उसका अपना सगा कोई नहीं था।

थोड़ी देर में हेड़िया के शव के आसपास ऊँचापाड़ा के कई लोग जमा हो चुके थे। किसी की हिम्मत नहीं थी कि वह पार्टी के ख़िलाफ़ कुछ बोले। लोगों के बीच मौजूद संगम सदस्यों ने भीमे को अपने पिता के शव को वहाँ से ले जाने को कहा। माओवादियों की नज़र में हेड़िया कुंजाम गद्दार था। उन्हें उससे कोई सहानुभूति नहीं थी। इतनी हमदर्दी भी नहीं कि उसका अन्तिम संस्कार करने में इस लड़की की मदद करें।

भीमे के साथ इस वक्त केवल दो लोग खड़े थे। रामदेव और सुरी।

* कमर के नीचे पहनी जाने वाली लुंगीनुमा धोती

** गोंडी में 'क्या' को 'बाता' कहा जाता है।

जनवरी 2002 – जुलाई 2004

6

हेड़िया कुंजाम को मरे चार साल हो गये थे। माओवादी बस्तर के अन्दरूनी गाँवों में अपनी जड़ें जमाते रहे। वे ख़ुद को इस घने जंगल का दावेदार कहते और अपनी जनताना सरकार को लोगों की असली हुकूमत बताते। देश के बड़े शहरी मध्य वर्ग के लोग उन्हें क्रान्तिकारी नहीं बल्कि अराजक, उपद्रवी और अपराधी ही मानते लेकिन माओवादी पार्टी लाल किले पर लाल निशान की कोशिश में लगी रही।

उधर मध्यप्रदेश से अलग होकर छत्तीसगढ़ एक नया राज्य बन चुका था और बस्तर इसका एक बड़ा हिस्सा था। नया सूबा बनने के बाद भी यहाँ बड़े बदलाव के आसार नहीं दिख रहे थे। सड़कें चौड़ी होने और बड़े बड़े सरकारी भवन बनने की बातें ज़रूर होतीं लेकिन असल में होता बहुत कम था। हालात लगभग जस के तस थे। दो साल पहले तक पूरा बस्तर एक ही ज़िला था - क्षेत्रफल के हिसाब से केरल से भी बड़ा। राज्य बनने के बाद बस्तर का बँटवारा हुआ। अब यहाँ कांकेर, बस्तर और दन्तेवाड़ा नाम से तीन ज़िले थे।

बस्तर के गाँवों में रह रहे आदिवासी अपनी ही धुन में जी रहे थे। उन्हें इस बात से मतलब था ही नहीं कि देश में सरकार किसकी है। प्रधानमन्त्री कौन है या उनके सूबे का मुखिया कौन है। ज़्यादातर लोग खेती किसानी में मसरूफ़ रहते। जंगल से महुआ लाते। लकड़ी और फल बटोरते। नाचते, गाते और नशा करते। माओवादी अब भी पहले की तरह बस्तर के जंगलों में घूम रहे थे। क्रान्ति का सपना सँजोये और बुर्जुआ सरकार और ब्यूरोक्रेटिक सैटअप के ख़िलाफ़ नारे लगाते। सरकार शहरों या बाहरी गाँवों तक ही सीमित थी। अन्दर के गाँवों में वरदी पहने दादा लोग ही सरकार चलाते।

पुलिस अन्दर गाँवों में जाती नहीं। जहाँ माओवादी कमज़ोर होते जंगल के उन इलाकों में फॉरेस्ट गार्ड और वन अधिकारी अपने फरमान चलाते। आदिवासी ज़्यादातर चुपचाप उनकी मनमानी सहते। कभी कभी बहुत परेशान होते तो *दादा लोगों* से शिकायत कर देते। दादा लोग इन जंगलात के कर्मचारियों को बुलाकर डाँटते फटकारते कभी कभी अपनी जन अदालत में बुलाकर पिटाई भी कर देते।

भीमे कुंजाम अब जंगल में महुआ बटोरने नहीं जाती थी। वह चिट्टापाड़ा के जूनियर हाइस्कूल में टीचर बन चुकी थी। पिता की हत्या के जख़्म भरे नहीं थे लेकिन उसने माओवादियों के ख़िलाफ़ उस कड़वाहट को अपने ऊपर हावी भी नहीं होने दिया।

आज 26 जनवरी के दिन स्कूल में गणतन्त्र दिवस के मौके पर छोटा सा जलसा था। बच्चों ने छोटे छोटे भाषण दिये। कविताएँ सुनाईं और आख़िर में देश भक्ति का गीत गाया।

विजयी विश्व तिरंगा प्यारा

झण्डा ऊँचा रहे हमारा... ऽऽऽऽ

गीत की आवाज़ पूरे स्कूल में चारों ओर गूँज रही थी। बच्चे ख़ुश थे। गीत के बोल और उसकी धुन उन्हें अच्छी लगी थी।

भीमे ने देखा कि टिनखू, जामा और कमली सबसे ऊँची आवाज़ में गा रहे हैं। टिनखू के शरीर पर फटी कमीज़ थी और निक्कर की सिलाई भी पीछे से उधड़ी हुई थी। पिछले साल उसका बाप मलेरिया से मर गया था। जामा और कमली भाई-बहन थे। जामा बारह का हो चुका था और कमली सात साल की थी। दोनों की हालत टिनखू से अच्छी नहीं थी। जामा को पोलियो ने लंगड़ा कर दिया था और कमली कुपोषण की शिकार थी। भीमे ने देखा दोनों बच्चों की आँखें इसी उम्र में धंस रही हैं।

फिर भी तीनों झण्डा गीत गा रहे थे।

इस जलसे की तैयारी खुद टीचर रमेश ने की थी। वह रायपुर से करीब साठ किलोमीटर दूर धमतरी का रहने वाला था। पिछले तीन हफ़्ते से वह बच्चों को भाषण, कविताएं और झण्डा गीत याद कराने में लगा था। आज बच्चों को गाते देख उसे अच्छा लग रहा था।

अब गीत का सुर ऊँचा होने लगा था।

'सदा सत्य सरसाने वाला
प्रेम सुधा बरसाने वाला
वीरों को हर्षाने वाला
मातृभूमि का तन-मन सारा...
झण्डा ऊँचा रहे हमारा'

चिट्टापाड़ा के इस जूनियर हाईस्कूल में हेडमास्टर समेत कुल चार टीचर थे। इसके अलावा एक चपरासी था, मड़काराम मंडावी, जो दिन में दो बार घण्टी बजाने के साथ साथ एक बार टीचरों के लिए चाय बनाने का काम भी करता। मन होता तो कभी कभी स्कूल की साफ़ सफ़ाई भी कर देता। हफ़्ते में शायद एक दो बार। हेडमास्टर रमानाथ झा अक्सर सरकारी काम का बहाना कर नदारद रहता। महीने में छह-सात दिन से अधिक उसकी सूरत न दिखती। आज भी वह चिट्टापाड़ा के अपने स्कूल में होने के बजाय जगदलपुर में था। स्कूल में हो रहे गणतन्त्र दिवस के जलसे में बच्चों के साथ केवल चार लोग थे। भीमे कुंजाम, रमेश और एक तीसरी टीचर मीना। चौथा शख़्स चपरासी मड़काराम था।

कोई पैन्तीस बच्चे छब्बीस जनवरी के दिन स्कूल में जमा हुए थे जो एक बड़ी बात थी। इस संवेदनशील इलाके के सभी स्कूलों में बाहर से पढ़ाने आए टीचर इस बात की परवाह ही नहीं करते कि कौन बच्चा कब स्कूल आता है और कब यहाँ से चला जाता है? वह क्या सीख रहा है? जिस कक्षा में वह है, उतनी काबिलियत उसने हासिल कर ली है या नहीं? यह सवाल वहाँ दी जा रही तालीम में कोई अहमियत नहीं रखते थे।

फिर भी भीमे कुंजाम बच्चों को हर रोज़ स्कूल आने और नई नई चीज़ें सीखने को कहती। उसका आदिवासी लगाव उसे पढ़ाने और बच्चों को आगे बढ़ाने के लिए उकसाता। लेकिन आज बच्चों की हाज़िरी में भीमे से अधिक रमेश का योगदान था। उसने बच्चों को स्कूल में खेलकूद, एक छोटे से नाटक और मिठाइयों का लालच दिया था। इसलिए गणतन्त्र दिवस पर झण्डा गीत से पहले नाटक और खेलकूद हुआ। अब टीचरों के भाषण की बारी थी।

मीना कुछ ख़ास नहीं बोली। उसने बस बच्चों को स्कूल आने पर शाबासी दी और पढ़लिख कर 'बड़ा आदमी' बनने को कहा। भीमे कुंजाम को यह सुनकर अच्छा नहीं लगा। वह बड़े आदमियों से नफ़रत करती थी। उनके स्वार्थी और शोषक स्वभाव के साथ साथ क्रूरता

बस्तर के इस उपेक्षित और अनदेखी भरे इलाके में उसने खूब देखी थी। मीना का भाषण खत्म हुआ तो भीमे ने ताली भी बस दिखावे के लिए ही बजाई।

अब बोलने की बारी रमेश की थी। उसने बच्चों के लिए ताली बजाई। फिर कहा,'आज तुम्हें स्कूल आकर मज़ा आया ना... यहाँ हम ऐसे ही कुछ न कुछ नया करते रहेंगे। कभी नाच गाना कभी खेलकूद, कभी गाना बजाना।'

फिर उसने अपने भाषण में बच्चों को देशभक्ति का पाठ भी पढ़ाया।

'बच्चों, ये झण्डा जिसके लिए तुम सबने ये गीत गाया ये हम सबकी जान है। हमारी शान है ये झण्डा। पूरे देश का सम्मान।'

बच्चे रमेश की बात समझने की नाकाम कोशिश कर रहे थे। लेकिन भीमे को रमेश के शब्द बिल्कुल खोखले लगे। बचपन से अब तक उसने बस्तर के इन गाँवों में भूख की तड़प देखी, बीमारियों से मरते लोग देखे। वन कर्मचारियों और अधिकारियों का भ्रष्टाचार देखा। उनके जुल्म देखे। सरकारी राशन की चोरी और स्कूलों से टीचरों की नदारदगी देखी। कभी कोई इन लोगों की मदद को नहीं आया। सरकार ही लोगों का ख़ून चूसती रही। आज रमेश की बात सुनकर उसे फिर लगा कि देशभक्ति का अफ़साना अक्सर सरकार और प्रशासन की ओर से अपनी नाकामी और ज़्यादतियों को ढकने का ही एक तरीका है।

'इस झण्डे के लिए हमारे सैनिक शहीद होते हैं। ये हमारी देशभक्ति हमारे देश प्रेम को दिखाता है। ये झण्डा है जिसके लिए हम अपना सिर कटा सकते हैं। इसकी शान कभी कम नहीं होनी चाहिये। झण्डा है तो हम सब हैं। अगर झण्डा नहीं तो हम भी नहीं।' रमेश का भाषण सुनकर भीमे को उबकाई आने लगी थी। झण्डे के नाम पर सुनाया जा रहा देशभक्ति का यह बखान उसे पूरी तरह से खोखला लगा। जब रमेश ने उससे बोलने के लिए बुलाया तो वह काफी अनमनी थी फिर भी उसे बच्चों से कुछ तो कहना ही था।

'बच्चों आज का दिन अच्छा रहा। तुम सब एक साथ खड़े हुए। खुश हुए। अच्छा लगा ये देखकर कि तुम लोगों ने मिलकर कुछ किया। आगे भी मिलजुल कर ऐसे ही कुछ न कुछ करते रहना।'

भीमे अपने भाषण में बच्चों से एकजुट होने की ही बात करती रही। एक साथ रहने, घर और स्कूल को साफ़ रखने और एक दूसरे का दर्द समझने की बातें। वह उनसे गोंडी में बोल रही थी। मीना और रमेश को गोंडी नहीं आती था लेकिन समझ में आ रहा था कि भीमे दिल की गहराई से बोल रही है। अपने भाषण के आख़िर में भीमे हिन्दी बोलने लगी ताकि साथी टीचर भी जान जायें कि वह अब तक क्या बोल रही थी।

'बच्चों ये तिरंगा झण्डा हमें देश से प्यार करना सिखाता है। लेकिन तुम सबको याद रखना है कि देश से भी बड़ी एक चीज़ है। और वो है एक इंसान। हमारे आपस में एक दूसरे से पड़ोसी का रिश्ता। देशभक्ति की ये बातें हमेशा अपने दिल में रखना पर ये भी सोचना कि कहीं ये बातें तुम्हें न भटकायें क्योंकि अपने पड़ोसी से प्यार करना और अपने साथी का ख़याल रखना सबसे बड़ी बात है। अपने पड़ोसी से, अपने साथी से प्यार करोगे तो हमेशा ज़मीन से जुड़ कर रह पाओगे।'

रमेश और मीना ने भीमे की ओर देखा फिर आपस में एक दूसरे को देखा। *क्या भीमे जो बोल रही है वो बात ये बच्चे समझ भी रहे होंगे?* रमेश ने सोचा।

‘तो बच्चों तुम देश का झण्डा तो उठाना लेकिन उससे पहले गरीब आदमी का झण्डा उठाना, इंसाफ़ का झण्डा उठाना और अन्याय के ख़िलाफ़ झण्डा ज़रूर उठाना। ठीक है?’

बच्चों की समझ में कुछ आया या नहीं, लेकिन सबने हाँ के इशारे में सिर ज़रूर हिलाया। रमेश को लगा ‘इंसाफ़ का झण्डा’ और ‘अन्याय के ख़िलाफ़ झण्डा’ तो माओवादियों के जुमले हैं।

भीमे किसी भी और चीज़ को तिरंगे से अधिक अहमियत कैसे दे सकती है? रमेश ने सोचा। उसके भीतर का शहरी राष्ट्रवाद भीमे को शक की नज़र से देखने लगा।

‘गद्दार साली,’ वह बुदबुदाया।

‘बहुत अच्छे।’ भीमे ने भाषण खत्म किया और अपनी जगह पर आकर बैठ गयी।

थोड़ी देर के लिए सन्नाटा छा गया। किसी को कुछ समझ नहीं आया कि भीमे बच्चों से बात कर रही थी या किसी और दुनिया में बैठे लोगों से बोल रही थी।

अब न कोई बोलने वाला था और न कुछ बोलने को बचा था। मड़काराम ने बच्चों को मिठाई बाँटनी शुरू की। बून्दी के लड्डू और टॉफियाँ लेकर बच्चे घर के लिए रवाना हो गये।

थोड़ी देर बाद रमेश भीमे के पास गया।

‘भीमे जी...मैडम अपने भाषण में आज आपने जो कहा, आपको लगता है बच्चे उसे समझे होंगे?’

‘आप समझे न सर?’ भीमे ने बिना एक भी पल रुके कहा। उसके शब्द रमेश के चेहरे पर घूंसे की तरह लगे।

‘... मुझे...मुझे बहुत हैरत हुई। सच कहूँ तो मुझे ग़ुस्सा आया।’

‘ग़ुस्सा क्यों आया रमेश जी?’ भीमे जानती थी कि अब क्या होने जा रहा है।

‘आपको नहीं लगता आपने कुछ ग़लत कहा?’

‘क्या ग़लत कहा मैंने?’

‘आपको नहीं लगता आपने कुछ भी ग़लत कहा?’ रमेश ने अपनी गर्दन टेढ़ी करते हुए आँखें फैला कर पूछा।

‘रमेश जी मैं आपके मुँह से सुनना चाहती हूँ कि आपको मेरे भाषण में क्या ग़लत लगा?’ भीमे का सुर सख़्त था। बातचीत अब गरम होने जा रही थी।

‘26 जनवरी के दिन आप बच्चों से कहती हैं कि देशभक्ति की बातें, इस झण्डे की बातें उन्हें भटका सकती हैं!’

‘जी नहीं... मुझे नहीं लगता कि मैंने कुछ ग़लत कहा रमेश सर। जैसे बाग़ी होना हमेशा ग़लत नहीं होता वैसे ही देशभक्ति का झण्डा उठाना हर वक्त सही नहीं हो सकता। हम देशभक्ति के नाम पर कुछ भी कहते और करते हैं। मैं चाहती हूँ जिस भी बच्चे को मैं पढ़ा रही हूँ वह देशभक्त बनने से पहले एक अच्छा इंसान बने...’

‘मैं समझा नहीं, देशभक्ति के विचार से आपको दिक्कत क्या है?’

‘कोई दिक्कत नहीं है रमेश जी। देशभक्ति के विचार में कुछ ग़लत नहीं है। उसकी आड़ में जो कुछ होता है वो ग़लत है और मैं इन बच्चों में अंधे देशप्रेम का ऐसा बीज नहीं बोना चाहती जो आसपास के लोगों के दर्द को न देखने दे।’

‘मतलब क्या है आपका?’

रमेश उन्हीं सवालों को बार बार कर रहा था। जैसे वह भीमे की बात समझना ही न चाहता हो। भीमे को अब ग़ुस्सा आने लगा।

‘मतलब अब तक आपको समझा आ जाना चाहिये सर। जामा और कमली को देखा आपने? जामा की टाँगे टेढ़ी हैं। पोलियो हो गया था उसे। वह अपना पैर नहीं उठा सकता। फिर भी चिल्ला रहा था। झण्डा ऊँचा रहे हमारा... झण्डा ऊँचा रहे हमारा।’ भीमे के चेहरे पर ग़ुस्सा और दर्द दिख रहा था।

‘बस्तर के आदिवासी बच्चों को देशभक्ति के नारे नहीं बल्कि दूसरी बुनियादी चीज़ें चाहिये। यहाँ अन्दरूनी गाँवों में लोग भूख से परेशान हैं। उन्हें राशन नहीं मिलता। कमली हाथ उठा उठा कर कह रही थी कि झण्डा ऊँचा रहे लेकिन उसकी आँखें चेहरे में धंस गयी हैं। देखा ना आपने?’

रमेश चुपचाप सुन रहा था। भीमे उसे दूसरी ही दुनिया दिखा रही थी।

‘टिनखू का बाप पिछले साल मलेरिया से मर गया। यहाँ दवाइयाँ नहीं आतीं। लोग उलटी दस्त से मर जाते हैं। मलेरिया तो बड़ी बीमारी है। टीचर स्कूलों में नहीं आते तो क्या देशभक्ति का झण्डा उठाकर सब ठीक हो जायेगा यहाँ?’

भीमे के सुर में एक तल्ख़ी थी। बातों बातों में उसने यह भी कह दिया कि बच्चों को पढ़ाने की बुनियादी ज़िम्मेदारी को निभाने में रमेश और मीना ईमानदार नहीं हैं। दोनों ने इस जलसे के लिए बच्चों को तैयार करने का ज़रूर काम किया लेकिन बाकी वक्त स्कूल में उनकी हाज़िरी काफी कम रहती। बस्तर के गाँवों में टीचरों का स्कूल में पढ़ाने न आना एक आम बात थी।

‘इन बच्चों को आपस में एक दूसरे से जुड़ने की ज़रूरत है,’ भीमे की आवाज़ में एक कम्पन था जो रमेश ने साफ़ महसूस किया। ‘देश के जिस इलाके में सरकार इतने सालों तक नहीं आयी वहाँ पन्द्रह अगस्त या छब्बीस जनवरी को झण्डा फहराना या मिठाई बाँटना एक दिन का जलसा हो सकता है लेकिन यहाँ की कड़वी ज़मीनी हक़ीक़त को नहीं बदला जा सकता।’

भीमे ने अपना झोला उठाया और घर की ओर रवाना हो गयी। रमेश उसे जाते हुए देखता रहा।

7

अरनपुर से कोई आठ किलोमीटर दूर घने जंगलों के भीतर माओवादी कैंप में कमाण्डर संजीवन रेड्डी अपने करीब 25 साथियों के साथ मीटिंग कर रहा था। वह पिछले ढाई साल से दक्षिण बस्तर की कमान सँभाले था। करीब चार साल पहले भीमे के पिता हेड़िया कुंजाम को जन अदालत में मौत की सजा देने वाला बीरम राव बस्तर से जा चुका था। वह इन दिनों झारखंड के पश्चिम सिंहभूम ज़िले में था। सारंडा के जंगलों में।

यहाँ बस्तर में उसकी जगह माओवादी कमाण्डर संजीवन रेड्डी ने ले ली थी। रेड्डी भी आंध्र प्रदेश से आया हुआ पीडब्लूजी का तेलगू कमाण्डर था। पीडब्लूजी यानी पीपुल्स वॉर ग्रुप जिसे तेलगू माओवादी पीपुल्स वॉर कहलाना ज़्यादा पसन्द करते हैं। संजीवन रेड्डी एक लम्बा चौड़ा नौजवान था। उम्र करीब पैन्तीस साल। लगभग छह फुट का उसका कद, मज़बूत कद-काठी और साँवला चेहरा। उसकी दाईं आँख के ऊपर चोट का निशान था।

चेहरा काफी आकर्षक। संजीवन मशहूर वारंगल रीजनल इंजीनियरिंग कालेज से पढ़ा था। एक ट्रेंड कैमिकल इंजीनियर। पढ़ाई के तीसरे साल में वामपन्थी और उग्र वाम विचारधारा से जुड़े बुद्धिजीवियों के सम्पर्क में आया और इंजीनियरिंग की डिग्री मिलते मिलते उसका दिमाग़ सशस्त्र क्रान्ति की बातों से काफी प्रभावित हो चुका था। उसके पास ढेर सारा क्रान्तिकारी साहित्य इकट्ठा हो चुका था। वह लेनिन, स्टालिन और माओ से लेकर फिडेल कास्त्रो और चे ग्वेवारा को ही नहीं पढ़ता बल्कि उसके पास भारत में कम्युनिस्ट सोच की नींव डालने वाले एमएन रॉय जैसे विचारकों का साहित्य भी था।

इसके बावजूद संजीवन रेड्डी का भरोसा लोकतन्त्र पर बना था और वह सिस्टम के भीतर रहकर सुधार करने की सोचता। पढ़ाई पूरी करने के बाद उसने हैदराबाद के पास एक निजी कम्पनी में नौकरी शुरू की। कम्पनी कैमिकल प्रोडक्ट बनाने का काम करती जो घर और घरेलू सामान की सफ़ाई में काम आते। तेईस साल की उम्र में वह ऊर्जा और आदर्शवाद से भरा था। इस नौकरी में उसके पहले कुछ महीने अच्छे गुजरे। उसे अपने काम में मज़ा आ रहा था।

फिर धीरे धीरे उसे पता चलने लगा कि कैसे एक निजी कम्पनी मुनाफ़े के लिए सरकारी नियमों की धज्जियाँ उड़ाती है। संजीवन रेड्डी को पता चला कि कम्पनी के अधिकारी पर्यावरण के जुड़े सारे मानकों की अनदेखी कर रहे हैं। प्लांट के पीछे से बहने वाली नदी में सारे ज़हरीले कैमिकल छोड़े जाते। इसी नदी का पानी आसपास के गाँव वाले इस्तेमाल करते। अख़बारों में अक्सर गाँवों में लोगों के बीमार होने और मरने की ख़बरें आतीं। रेड्डी को पता था कि इन बीमारियों का रिश्ता इस इलाके में चल रहे प्लांट्स से निकल रहे ज़हरीले कैमिकल से है। रेड्डी ने कम्पनी के भीतर भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाई तो मैनेजमेंट ने उसे चुप रहने को कहा। बाद में रेड्डी को पता चला कि सारी कम्पनियाँ सरकारी अफ़सरों तक पैसा पहुँचाती हैं। इसके बाद उसने कम्पनी में ऊँचे स्तर पर शिकायत की। कम्पनी ने खुद इस पर कोई कदम नहीं उठाया लेकिन कुछ दिनों बाद रेड्डी को ये कहकर निकाल दिया कि वह कम्पनी की ख़बरें मीडिया में लीक कर रहा है।

संजीवन रेड्डी का विश्वास सिस्टम से उठने लगा। फिर भी नौकरी छोड़ने के बाद उसने इन तमाम कम्पनियों और सरकारी अधिकारियों के ख़िलाफ़ केस दर्ज किया। कुछ ही महीनों में कम्पनियों ने एकजुट होकर पुलिस और घाघ वकीलों की मदद से अदालत में अपनी मनवा ली। रेड्डी केस हार गया। इसके बाद धीरे धीरे वह उग्र वामपन्थ की ओर झुकता गया और एक दिन पीडब्लूजी का सदस्य बन गया।

पिछले दो सालों में उसने माओवादियों के दबदबे को इस इलाके में फैलाने में अच्छी कामयाबी हासिल की थी। बस्तर के गाँवों में लोग उसे संजी दादा के नाम से जानते और पुकारते थे। बड़े माओवादी नेता उससे खुश थे। खुद माओवादी कमाण्डर कोसा कई बार उससे मिलकर जा चुका था। दो महीने पहले ही माओवादियों के सुप्रीम कमाण्डर गणपति ने उसे शाबासी का ख़त भेजा था।

संजीवन के सामने एक बड़ा मिशन था - पीएलजीए में अधिक से अधिक महिलायें शामिल करना। आज उसके साथ बैठे करीब दो दर्जन माओवादियों में आठ महिलायें थीं जिनमें से पाँच महिला कॉमरेड तो पिछले तीन महीनों में ही शामिल हुईं थीं। इसके अलावा करीब दस

महिलाओं को ट्रेनिंग देकर वह बस्तर के दूसरे गाँवों में भेज चुका था लेकिन उसका मिशन इस इलाके से कम से कम सौ महिलाओं को ट्रेनिंग देकर पीएलजीए में शामिल करना था।

रेड्डी की इस मीटिंग में भी महिला काडर की भरती ही प्रमुख मुद्दा था। उसने माओवादी कमाण्डर सरिता और सीमा को ये ज़िम्मेदारी सौंपी थी। सरिता बीजापुर ज़िले के बासगुडा की रहने वाली थी। एक मुरिया आदिवासी। पांच फुट पांच इंच लम्बी सरिता माओवादियों की इस प्लाटून में सबसे तेज़ दौड़ने वाली सदस्य थी। वह कुछ घण्टों में ही कठिन पहाड़ियों में पच्चीस से तीस किलोमीटर तक का फ़ासला पार कर जाती। माओवादी संगठन में शामिल होने के बाद उसने करीब तीन महीने तक दिन रात निशानबाज़ी का अभ्यास किया था और आज वह बस्तर के सबसे अचूक निशानबाज़ों में थी।

सरिता मज़बूत और आकर्षक डील डौल वाली थी। उसका रंग सांवला था और आँखें बड़ी बड़ी। सरिता हर वक्त बालों को जूड़े की शक्ल नें बाँधे रखती लेकिन जब वह उन्हें खोलती तो उसके लम्बे बाल कमर तक आकर बिखर जाते। बाईस साल की इस आदिवासी लड़की में बला की ख़ूबसूरती थी लेकिन वह अक्सर कठोर और गम्भीर मुद्रा में ही रहती।

सीमा नारायणपुर के पास फरसगाँव की थी। एक गोंड आदिवासी। उसकी उम्र अभी अठारह साल की ही थी। तीन साल पहले जब वह माओवादियों की सांस्कृतिक शाखा चेतना नाट्य मंडली के सम्पर्क में आयी। तब तक उसे माओवाद के बारे में अधिक पता नहीं था। पन्द्रह साल की उम्र में वह नक्सलवादियों को आतंक फैलाने वाले उपद्रवियों से अधिक कुछ नहीं समझती थी। लेकिन चेतना नाट्य मंडली का गीत-संगीत उसे बहुत अच्छा लगा। पहली बार सीमा की किशोर समझ का सामना माओवादी संघर्ष के वैचारिक पक्ष के साथ हुआ। बस्तर के इस पिछड़े इलाके में शोषित और दबी कुचली जनता के बीच पल रही लड़की के लिए यह जागरुकता का नया आकाश खुलने जैसा था।

संयोग से संजीवन रेड्डी उन दिनों नारायणपुर के गाँवों में चेतना नाट्य मंडली के साथ भेष बदलकर घूम रहा था। उसने सीमा में माओवादी संघर्ष के साथ जुड़ने की ज़बरदस्त सम्भावना देखी। रेड्डी के कहने पर चेतना नाट्य मंडली के सदस्यों ने सीमा को कुछ दिन मंडली के साथ गुज़ारने को कहा। रेड्डी के लिए सीमा का वह प्रवास उसे माओवादी आन्दोलन में शामिल करने के लिए काफी था।

अपने इन दो महत्वपूर्ण माओवादी सदस्यों की मदद से संजीवन रेड्डी महिला काडर का विस्तार करना चाहता था।

'कॉमरेड आने वाले दिनों में महिलाओं की भागेदारी बढ़ाना पार्टी का पहला मकसद होगा। बोले तो वो लड़कियाँ जो शासक वर्ग का अत्याचार झेला हो। जो विरोध करना चाहते या जिन्हें इसके लिए तैयार किया जा सकता,' रेड्डी ने तेलगू लहजे वाली हिन्दी में अपने साथियों से कहा।

माओवादियों की सोच में महिलाओं की काडर मौजूदगी नेटवर्क के फैलाव से लेकर गुरिल्ला रणनीति बनाने और खुफिया सूचना का तन्त्र मज़बूत करने में पार्टी के लिए बहुत फायदेमन्द थी।

'कॉमरेड सीमा और कॉमरेड सरिता इसकी जिम्मेदारी लेगी,' रेड्डी ने कहा और फिर उन दोनों की ओर देखते हुए बोला, 'कॉमरेड, बोले तो आप लोग कुछ दिनों के लिए हथियार छोड़ के

और चेतना नाट्य मंडली में शामिल होना का। दोनों जन मंडली के साथ बस्तर के गाँवों में घूम के उन लड़कियों को ढूंढना जो पार्टी में शामिल हो सकती।'

'जी कमाण्डर,' सरिता ने कहा। फिर सीमा की ओर देखा। उसे देखकर संजीवन को लगा कि शायद उसके मन में कोई सवाल है।

'कुछ पूछना है तुमको कॉमरेड सीमा?' रेड्डी ने कहा।

'शुरू कहाँ से करेंगे?' सीमा ने पूछा।

'बीजापुर से...,' रेड्डी के जवाब देने से पहले ही सरिता तपाक से बोली।

'तुम्हारा इलाका है...,' रेड्डी मुस्कुरा कर बोला। 'पर सँभल कर रहना... पहचान नहीं होना चाहिये,' इतना कहकर वह वहाँ से चला गया। सीमा और सरिता दूसरे साथियों के साथ आगे की प्लानिंग करने लगीं।

8

जुलाई का महीना। तीसरा हफ़्ता था। पूरे बस्तर में सूरज आग उगल रहा था। रुक रुक कर बरसात होती लेकिन फिर भी पारा चालीस से पैन्तालीस डिग्री के बीच रहता। उमस की वजह से यह गरमी बेहद तकलीफ़देह हो गयी थी। एक ओर गरमी की मार ओर दूसरी ओर बरसात के बाद फैल रही बीमारियाँ। बच्चे इसका बड़ा शिकार बन रहे थे। किसी को उलटी-दस्त होता तो किसी को लू लग जाती। इस सब के बीच मलेरिया की मार तेज़ी से बढ़ रही थी। मध्य भारत के अन्दरूनी गाँवों में बच्चों को मलेरिया के साथ साथ हैजा और दिमागी बुख़ार जैसी बीमारियाँ भी पकड़ लेती। उल्टी दस्त से होने वाली मौत आम थी। भीमे के स्कूल के बच्चे भी बीमार पड़ रहे थे। उनकी हाज़िरी कम होती जा रही थी।

चिट्टापाड़ा के जूनियर हाइस्कूल में बच्चों की हाज़िरी ही कम न थी टीचर भी गायब थे। हेडमास्टर का कुछ अता पता नहीं रहता था। मीना एक बार फिर से मेडिकल लीव पर थी। रमेश हफ़्ते में एक या दो दिन आता। उसमें भी या तो वह देर से आता या जल्दी चला जाता। बच्चों को पढ़ाने और हालात बदलने का उसका जोश पिछले छह महीने में ही ठंडा पड़ चुका था। उसे इस स्कूल में आए डेढ़ साल हुआ था। पहले एक साल तो उसमें कुछ करने का थोड़ा बहुत जोश दिखा लेकिन फिर धीरे धीरे वो भी कम होता गया। पिछली होली की छुट्टी में रमेश अपने घर धमतरी गया तो वहाँ से नयी चाहत पाल लाया और अब वह स्टेट पब्लिक सर्विस कमीशन परीक्षा की तैयार कर रहा था। किसी ने उसके दिमाग़ में ये बात डाल दी थी कि बस्तर में टीचर रहते इस परीक्षा को पास करने का सुनहरा मौका है क्योंकि बिना नौकरी छोड़े स्कूल से गायब रहकर वह परीक्षा की तैयारी का भरपूर वक्त निकाल सकता है।

मीना को चिट्टापाड़ा के स्कूल में ढाई साल हो गये थे। जब से आयी थी स्कूल की पढ़ाई लिखाई में उसका योगदान न के बराबर ही रहा। पहले कुछ दिन वह बीमार हुई। फिर ठीक होकर आयी तो कुछ हफ़्ते बाद उसने शादी कर ली थी और महीने भर छुट्टी पर रही। उसका पति कोंडागाँव में एक सरकारी बैंक में क्लर्क था। चिट्टापाड़ा से दन्तेवाड़ा करीब दो घण्टे लगते और वहाँ से कोंडागाँव तकरीबन तीन घण्टे का रास्ता था। यानी मीना को अपने पति के पास जाना हो तो आधे दिन का सफर था। वह अक्सर कोंडागाँव जाती तो फिर चार पाँच दिन बाद ही आती। स्कूल आने का अनियमित क्रम ऐसे ही चलता रहा जब तक मीना को यह पता

नहीं चल गया कि वह माँ बनने वाली है। उसके बाद उसका स्कूल आना तकरीबन बन्द ही हो गया। साल भर बाद जब वो यहाँ आयी तो उसने भीमे को बताया कि वह अपने तबादले की कोशिश कर रही है। मीना रायपुर के पास दुर्ग की रहने वाली थी और चाहती थी वहीं किसी स्कूल में उसका तबादला हो जाये।

टीचरों की ऐसी लापरवाही और स्कूल से गैरमौजूदगी से भीमे आज ग़ुस्से से उबल रही थी।

इन गाँवों में सारे नियम कानून ताक पर रखकर मनमानी करना कितना आसान है। भीमे अक्सर सोचा करती। *क्या यही लोग शहरी इलाकों के स्कूलों से इस तरह गैरहाज़िर रह सकते हैं जो यहाँ नियम कानून नहीं मानता वह शहरों में नियमों और वक्त का पाबन्द कैसे हो जाता है?* भीमे के दिमाग़ में बार बार यह सवाल उमड़ते।

आज पूरे दिन भीमे ने दूसरी से लेकर पाँचवीं तक की बच्चों को पढ़ाया था। बच्चों की संख्या कम थी। कुछ यूँ ही न आते थे, कुछ माँ-बाप के साथ जंगल में चले जाते। फिर भी पहली से आठवीं तक की कक्षा के सारे बच्चों को मिलाकर कुल साठ से अधिक बच्चे स्कूल आए थे। इन सबके लिए टीचर के नाम पर भीमे ही मौजूद थी।

पहली कक्षा उसने चपरासी मड़काराम के भरोसे छोड़ दी थी। मड़काराम अनपढ़ था लेकिन वह इन छोटे बच्चों के साथ खेलता और कुछ कविताएँ गा लेता। यही इन बच्चों की पढ़ाई थी।

छठी से आठवीं तक के बच्चों को पढ़ाने में भीमे का कोई रोल नहीं था। उन्हें पढ़ाने की ज़िम्मेदारी रमेश और हेडमास्टर रमानाथ झा की थी। झा साहब का अक्सर पता नहीं था। रमेश अपनी परीक्षा की तैयारी में व्यस्त होता।

चिट्टापाड़ा के जूनियर हाइस्कूल का ही नहीं, बस्तर के तमाम गाँवों का यही हाल था। यहाँ टीचरों का नदारद रहना कोई हैरत वाली बात नहीं थी। मीना और रमेश तो बस्तर के बाहर के रहने वाले थे। दूसरे स्कूलों में जहाँ इसी सम्भाग के निवासी टीचर थे उन्हें भी बच्चों की कोई फिक्र नहीं थी। यहाँ स्कूलों में टीचर नदारद थे। उसकी एक वजह यह भी थी कि इन गाँवों में जागरूकता का स्तर बेहद कम था। टीचरों के स्कूल से गायब रहने का विरोध करना तो दूर, लोग अपने बच्चों को नियमित रूप से स्कूल भेजने में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाते थे।

स्कूल की छुट्टी का वक्त हो रहा था। भीमे स्कूल को बन्द करवा कर घर जाने की सोच ही रही थी कि अचानक उसे दूर से कोई आता दिखा। हेडमास्टर रमानाथ झा रमेश के साथ आ रहा था। अब तक खीझकर भीमे ने अपने ग़ुस्से पर काबू पा लिया था। हालात से समझौता कर वह अब घर निकलने की सोच रही थी लेकिन इन दोनों को आते देख उसके ग़ुस्से में उबाल आ गया। उसके पूरे शरीर में करण्ट सा दौड़ा। उसने सोच लिया रोज़ घुटने से अच्छा है कि जो दिल में है आज कह देगी।

'क्या हाल हैं भीमे मैडम?'

हेडमास्टर रमानाथ ने स्कूल में घुसते हुए लापरवाही से पूछा। उसके पीछे मुस्कुराता हुआ रमेश भी दाख़िल हुआ।

भीमे के दिल से ख़ून उछल कर जैसे दिमाग़ की ओर दौड़ा। वह चुप रही। ग़ुस्से में अपने धड़कते दिल की आवाज़ वह ख़ुद सुन पा रही थी।

'किसके हाल पूछ रहे हैं सर, मेरे या स्कूल के?' भीमे ने ख़ुद को काबू करते हुए पूरे संयम से कहा।

हेडमास्टर समझ गया कि भीमे की इस बात में कटाक्ष है लेकिन वह ग़ुस्से को भांप नहीं पाया। उसे शायद एहसास भी न था कि एक सीधी सादी सी दिखने वाली आदिवासी लड़की को यहाँ स्कूलों में टीचरों की गैरहाज़िरी पर ग़ुस्सा आ सकता है। उसने चारों ओर देखा। स्कूल में साफ़ सफ़ाई ठीक ठाक सी की हुई थी। लगता था कि उनके न होने पर भी चपरासी मड़काराम लगातार आ रहा था। बाहर ब्लैक बोर्ड पर ककहरा, पहाड़े लिखे हुए थे। बच्चों को गणित के जोड़ घटाने सिखाने की कोशिश भी साफ़ दिखती थी। ज़्यादातर बच्चे घर जा चुके थे लेकिन छठी से आठवीं के बड़े बच्चे कुछ दूरी पर क्रिकेट खेल रहे थे। उनकी आवाज़ें यहाँ तक आ रही थी।

'स्कूल तो लगता है कि ठीक चल रहा है। तुम अपनी सुनाओ भीमे जी।'

हेडमास्टर के इन शब्दों ने जैसे भीमे के शरीर में आग लगा दी। उसका ख़ून खौलने लगा। *स्कूल से ग़ायब रहने वाला ये अधेड़ उम्र का टीचर जिसे यहाँ की बेहतरी के लिए सोचना चाहिये वह कैसे बेशर्मी से पढ़ाई का मखौल उड़ा रहा था। उसके लिए शायद यहाँ के बच्चे जैसे कीड़े-मकोड़े हैं,* भीमे ने सोचा।

'स्कूल ठीक नहीं चल रहा सर। स्कूल बिल्कुल ठीक नहीं चल रहा,' उसने तीखे सुर में झा की ओर देखकर कहा।

'क्यों बच्चे नहीं आ रहे स्कूल में?'

'बच्चे कम आ रहे हैं लेकिन टीचर बिल्कुल भी नहीं आ रहे। भीमे ने सीधे हेडमास्टर की आँखों में देखकर कहा। 'और उससे बड़ी बात ये कि स्कूल के हेडमास्टर साहब नहीं आ रहे।' भीमे जानती थी कि आज तक हेडमास्टर के आगे किसी टीचर ने इस तरह बात नहीं की होगी।

'तुम होश में तो हो भीमे कुंजाम? क्या बोले जा रही हो?' हेडमास्टर झा झिड़क कर बोला।

'होश में हूँ मास्टर जी इसलिये रोज़ स्कूल आती हूँ।' भीमे का यह जवाब हेडमास्टर के मुँह पर थप्पड़ जैसे लगा। रमेश बुरी तरह झेंप रहा था। उसे भीमे के मिज़ाज का पता था पर वह नहीं जानता था कि वह हेडमास्टर से भी इस तरह उलझ जायेगी।

'अरे इन इलाकों में स्कूल खुल गये हैं क्या ये कम है,' झा भीमे से बेइज्ज़त होकर भी हार नहीं मानना चाहता था। 'कोई नहीं आता इन इलाकों में पढ़ाने जहाँ हगने की भी कोई सुविधा नहीं, सड़क नहीं, अस्पताल नहीं और जान का ख़तरा है सो अलग। ये स्कूल तो फिर भी ठीक ठाक चल रहा है जहाँ चपरासी आकर घण्टी तो बजाता है।'

भीमे कुछ बोलती इससे पहले पहले झा बोला, 'और तुम बताओ इन हालात के लिए कौन ज़िम्मेदार है। आदिवासियों के क्रान्तिकारी ना जो यहाँ कुछ होने नहीं दे रहे।'

भीमे को समझते हुए देर न लगी कि झा का इशारा नक्सलियों की ओर है।

'इस बात का उन टीचरों के स्कूल से गायब रहने से क्या रिश्ता है हेडमास्टर जी?'

'क्योंकि यहाँ लोग बदलना नहीं चाहते। वो जंगल में रहना चाहते हैं। तीर कमान के साथ। उन्हें पढ़ाई करने से अधिक महुआ बटोरना अच्छा लगता है। इसका फ़ायदा वह क्रान्तिकारी उठा रहे हैं जो यहाँ बन्दूक लेकर घूमते हैं और कोई यहाँ नहीं आता।'

हेडमास्टर को लगा कि उसने ज़ोरदार तर्क देकर भीमे का मुँह बन्द कर दिया है लेकिन उसके जवाब से भीमे का ख़ून खौल गया।

'सर... सर... सर... रुकिये... हम आदिवासियों को गाली देने से पहले इसी स्कूल की एक बात सुन लीजिये। इसी साल 26 जनवरी के दिन इस स्कूल में एक छोटा सा जलसा करवाया गया सर। आप नहीं थे। आपकी कमी खली भी नहीं क्योंकि आप स्कूल में रहते ही नहीं,' भीमे ने हेडमास्टर पर ताना मारते हुए कहा।

रमानाथ झा का मुँह खुला रह गया। वह भीमे को देख रहा था।

'उस दिन यहाँ देशभक्ति की बड़ी बड़ी बातें हुईं और ये बातें करने वाले न तो इस स्कूल के आदिवासी बच्चे थे और न ही मैं एक आदिवासी टीचर। ऐसी बातें आप जैसे लोगों ने की जो आदिवासी नहीं है। वो जो आपकी शहरी सभ्य समाज के लोग हैं, उन लोगों ने उस दिन बच्चों को देशभक्ति सिखाई।'

भीमे ने रमेश की ओर देखकर कहा, 'जो लोग उस दिन देशप्रेम सिखा रहे थे वो फिर स्कूल से ही गायब हो गये सर। ये है हम आदिवासियों का सच और यही है आप जैसे लोगों की सोच जो इन गरीबों को गाली देते हैं अपनी ग़लती छुपाने के लिए मास्टर जी,' भीमे ने ग़ुस्से से हेडमास्टर की आँखों में आँखें डाल कर कहा।

दोनों एक दूसरे को देखते रहे। भीमे ग़ुस्से से काँप रही थी। रमेश को जैसे किसी ने बर्फीले ठंडे पानी में डाल दिया था।

रमानाथ झा कुछ कहता इससे पहले भीमे स्कूल से बाहर निकल गयी। उसके पीछे हेडमास्टर के साथ रमेश और चपरासी मंडावी उसे जाते देखते रहे।

9

बिशन ने जिस बच्चे को गोद में उठाया उसकी उम्र सात साल थी लेकिन वज़न मुश्किल से पन्द्रह किलो रहा होगा। उसका शरीर पसीने से भीगा हुआ था। तेज़ बुख़ार अभी अभी उतरा था जिसकी वजह से वह बिल्कुल ठंडा पड़ा हुआ था। उसने बच्चे का सिर सहलाया और अपने साथी को इशारा किया जिसने बैग में से स्पिरिट की शीशी, स्लाइड और सुई निकाली।

'देवा... इधर, इस हाथ में।' बिशन ने कमज़ोर और तकरीबन मूर्छा में पड़े बच्चे के बाएँ हाथ की बीच की उँगली को पकड़ कर कहा।

देवा ने स्परिट से भीगी रुई से बच्चे की उँगली साफ़ की और सुई चुभाई।

बच्चा रोने लगा। देवा ने उँगली दबाई और ख़ून की दो-तीन बूँदें स्लाइड पर लीं। फिर बच्चे की उँगली को रुई से तेज़ दबाया और उसके बालों को सहलाते हुए गोंडी में बोला, 'आन्ता, आन्ता' (हो गया, हो गया)। बच्चा अब भी रो रहा था।

बिशन ने उसे पास खड़ी हैरान-परेशान माँ को थमा दिया।

अचानक माँ ने रोना शुरू कर दिया और बिशन का हाथ पकड़ लिया। वह गोंडी में कुछ बोले जा रही थी। बिशन ने देवा को पास बुलाया।

'पिछले महीने दो बच्चे मर गये। अब ये अकेला बचा है। पति पिछले साल इसी बीमारी से मरा था।' देवा ने बच्चे की माँ की बात सुनकर बिशन को समझाया। बिशन भी गोंड आदिवासी था लेकिन रायपुर में पैदा हुआ और वहीं पला बढ़ा इसलिए गोंडी थोड़ी बहुत ही समझ पाता।

गाँव के अन्दरूनी इलाकों में खांटी देहाती भाषा समझने में उसे दिक्कत होती। रायपुर में उसने बारहवीं तक की पढ़ाई की और फिर दिल्ली जाकर पैरामेडिकल का कोर्स किया। वह बचपन से इन आदिवासी गाँवों के अन्दर जाकर लोगों का इलाज करने की सोचा करता। अपने पिता से उसने सुना था कि उसके बड़े भाई और बहन की मौत मलेरिया से हो गयी थी। गाँव में इलाज की कोई सुविधा न थी और अनपढ़ माँ-बाप को बीमारी समझ में नहीं आयी। जब पता चला तो किसी तरह जगदलपुर पहुँचे लेकिन बात बिगड़ चुकी थी। रायपुर लाते लाते भाई ने दम तोड़ दिया। तीसरे दिन बहन भी चल बसी। मलेरिया बस्तर के गाँवों के सबसे बड़ी जानलेवा बीमारी थी।

अपने दो बच्चों की मौत के बाद माँ-बाप वापस गाँव जाने की हिम्मत नहीं जुटा पाये। रायपुर में ही बस गये। शहर में बिशन के आदिवासी माता-पिता के लिए ज़िन्दगी आसान नहीं थी। पिता ने यहीं मज़दूरी शुरू की। माँ दूसरों के घर में चौका-बरतन करने लगी। दो साल बाद बिशन पैदा हुआ। बड़ा होते हुए अपने भाई-बहनों की मौत की कहानी सुनी। फिर धीरे धीरे पता चला कि उसके गाँव में अब भी हर साल कितने लोग मलेरिया और डायरिया से मरते हैं। इन बातों से उस पर एक डॉक्टर बनने का जुनून हावी हो गया लेकिन जल्दी ही उसे पता चला कि डॉक्टर बनने के लिए बहुत लम्बा रास्ता तय करना पड़ता है। उसके माँ-बाप के पास इतने पैसे भी नहीं थे कि उसे अच्छी पढ़ाई करा सकें, डॉक्टर बनना तो दूर की बात थी। बिशन के लिए पैरामेडिकल की ट्रेनिंग इस मिशन से जुड़ने का थोड़ा सस्ता और आसान रास्ता था। अपनी मेहनत से उसने दिल्ली के सरकारी संस्थान में एडमिशन हासिल भी कर लिया। कोर्स पूरा कर रायपुर आया और एक हेल्थ एनजीओ से जुड़ गया जो इन गाँवों में लोगों की मदद कर रही थी।

आज अपने तीन साथियों के साथ बिशन उसेंडी बस्तर के अन्दरूनी गाँवों में था। बीजापुर के गंगालूर के पास इस गाँव में बैठा वह अधेड़ उम्र की महिला की आँखों में देख रहा था। एक-एक कर बच्चों को खोने का दर्द क्या होता है इसकी पीड़ा उसने अपने माता-पिता के चेहरे और बातों में बचपन से महसूस की थी। लेकिन इस महिला ने तो अपने पति के जाने के बाद बच्चों को मरते देखा।

किसने इसे ढाढस बँधाया होगा? बिशन सोचने लगा। बस्तर के इन इलाकों में ऐसे लोगों से वह तकरीबन हर रोज़ मिल रहा था। कभी कभी भावशून्यता उसके भीतर घर कर जाती और तो कभी काम के बोझ तले उसके जज़्बात दब जाते। लेकिन जब फ़ुर्सत मिलती तो चेतना फिर जग जाती। ऐसे हालात देखकर वह परेशान हो जाता। कभी अकेले में रो भी लिया करता। रोने से उसका जी हल्का हो जाता। फिर यह सोचकर वह खुद को समझा लेता कि इन लोगों को दलदल से निकालने के लिए कुछ तो कर ही रहा है।

देवा ने बैग से कुछ गोलियाँ निकालीं। फिर उस औरत को समझाया कि बच्चे को दवा कैसे देनी हैं।

मलेरिया की गोलियाँ काफी कड़वी होतीं। बच्चों को खिलाना बहुत ही कठिन काम था। उनके लिए क्लोरोक्विन के सिरप की ज़रूरत होती ताकि बच्चों को आसानी से पिलाया जा सके। अक्सर सिरप मिलता नहीं था। सरकार कभी कभार कुछ मदद करती लेकिन वह काफी नहीं थी। इन स्वास्थ्य कर्मियों के पास संसाधन बेहद सीमित थे।

‘देवा बच्चा गोलियाँ उलट देगा। पाउडर बना दो,’ बिशन ने कहा।

देवा ने गोलियों को एक छोटे ओखलीनुमा कटोरे में डाला और पीस कर पुड़िया बना दी।

बच्चों को गोलियों के मुकाबले पाउडर देना आसान था। गोलियों को तो बच्चे थूक देते या उलटी कर देते। पाउडर कारगर था जिसे पानी में घोलकर पिलाया जा सकता। इन गाँवों में हेल्थ वर्करों को बच्चों के माँ बाप को यह भी सिखाना होता कि दवा कैसे दी जाये। जब देवा ओखली में गोलियों को पीसकर खुराक बना रहा था तो बच्चे की माँ उसे घूरकर बिना पलकें झपकाये देख रही थी जैसे वह कोई बड़ा वैज्ञानिक प्रयोग कर रहा हो। बिशन समझ गया कि उसे दवा देने का तरीका भी समझाना होगा।

‘एक खुराक अपने सामने देनी होगी देवा।’ बिशन ने पाउडर को कटोरी में घोला। देवा ने बच्चे को माँ की गोद ले लिया और फिर कहा, ‘इलकेन उप्पी कियनेद।’ (इस तरह पिलानी होगी)

बिशन ने चम्मच से दवा को घोल जैसे ही बच्चे के मुँह में डाला वह छटपटाने लगा। देवा ने उसके हाथ-पैर पकड़े हुए थे लेकिन बच्चा दवा को गटकने के बजाय मुँह में रोके हुए था।

बिशन ने मां की ओर देखते हुए बच्चे की नाक बन्द कर दी और कहा, ‘इलकेन’ (इस तरह)।

अब नाक बन्द होने पर बच्चे के पास दवा को निगलने के अलावा कोई रास्ता नहीं था।

‘देवा... यहाँ और लोगों को लगाना होगा। गाँवों के हाल बहुत खराब हैं। बीमारी बढ़ती ही जा रही है,’ बिशन ने गम्भीर सुर में कहा।

देवा ने हाँ में सिर हिलाया। फिर पूछा, ‘लेकिन ये सब होगा कैसे? बीमारी तो हर गाँव में फैल रही है।’

‘लोगों को जानकारी देने के लिए कैंप लगाने होंगे। गाँव में ही कुछ लड़के-लड़कियों को तैयार करना होगा जो इस काम में लगें और मदद करें। केवल हेल्थ वर्करों के भरोसे नहीं छोड़ सकते।’

इन बातों को सुन रहा एक लड़का बिशन के पास आया। उसकी आँखें उभरी हुई थीं। माथा चौड़ा और चेहरा चौकोर था। वह अपने बालों पीछे किये हुए था और एक छोटी सी चुटिया बाँधी हुई थी।

‘जोहार।’

‘जोहार।’

‘भैया हमें कुछ कहना है...’

‘बोलो ना...’

‘हम आपकी बात सुन रहे थे। हम बीमारी के बारे में लोगों को बताने में मदद करेंगे।’

‘अच्छी बात है। स्कूल गये हो? मतलब कुछ पढ़ाई की है तुमने?’

‘जी हाँ, आठवीं तक।’

बिशन को लगा कि आठवीं तक पढ़ा लिखा इस उम्र का लड़का अगर बात ठीक से समझ जाये तो काफी मददगार हो सकता है।

'क्या तुम कुछ लोगों को अपने साथ जोड़ सकते हो जो गाँव वालों को मच्छरों से बचाव का तरीका बतायें और बीमारी के लक्षण दिखते ही मलेरिया की दवा दें?'

'जी भैया।'

'तो फिर ये काम आज से ही शुरू कर दो। हमने कई लोगों को दवा बाँटी है और बाँट रहे हैं। उन सबसे मिलो और देखो कि दवा खाने में कोई लापरवाही न करे। ये तुम्हारा पहला काम है,' बिशन ने उस लड़के से कहा।

'देवा इन्हें अच्छी तरह समझा दो। जिन मरीजों को दवा दी है उन्हें कैसे दवा खानी है। कोई भी इस तरह पानी इकट्ठा न होने दें। इससे बीमारी फैलती है,' बिशन ने आसपास गढ्ढों में जमा पानी की ओर इशारा करते हुए कहा।

'ये लोग शाम को और रात के वक्त घरों के बाहर नीम और तुलसी की पत्तियाँ जलाएं। मच्छरों को भगाने के लिए,' कहते हुए बिशन एक साथी के साथ मोटरसाइकिल में पीछे बैठ गया। उसके पीछे देवा और बाकी दो हेल्थ वर्कर बैठे।

जाते जाते उसने लड़के से पूछा, 'क्या नाम बताया तुमने अपना?'

'विकास...'

अगले पाँच घण्टों तक बिशन ने देवा और बाकी दो साथियों के साथ मोटरसाइकिल से इस इलाके के दर्जन भर गाँवों का दौरा किया। ख़ून के नमूने इकट्ठा किये और कई जगह जमा हुए पानी के सैम्पल भी लिये। इन अन्दरूनी गाँवों में अस्पताल भी काग़जों पर ही थे। बिशन जैसे स्वास्थ्य कर्मचारियों के लिए बस्तर में बीजापुर और जगदलपुर ही दो जगहें थीं जहाँ वह ख़ून और पानी के नमूनों को जाँच के लिए दे सकते थे।

जब वह अपने साथियों के साथ इन गाँवों से रवाना हुआ तो अँधेरा होने को था। देर रात तक उन्हें वापस बीजापुर पहुँचना था।

10

भीमे स्कूल से घर पहुँची तो देखा कि रामदेव उसका इन्तज़ार कर रहा है। उसने भीमे के लिए खाना बनाना भी शुरू कर दिया था।

'अरे कब आया तू रामा?' भीमे ने अपना झोला दीवार पर लगी खूँटी पर टाँगते हुए कहा।

रामदेव ने भीमे की ओर देखा। उसके चेहरे पर परेशानी का एक बवंडर था जो रामदेव जैसा प्रेमी ही समझ सकता था। रामदेव ने भीमे से शादी नहीं की थी लेकिन वह अरनपुर छोड़कर अब छुट्टेपाल आ गया था। अब दोनों साथ साथ रहते थे। इतने सालों के रिश्ते में दोनों का प्यार लगातार गाढ़ा ही हुआ। रामदेव का दिल भीमे के लिए पहले की तरह ही धड़कता। जंगल में महुआ बटोरने गयी भीमे को देखकर उसके दिल में जो उथल पुथल होती थी वैसी ही बैचेनी के साथ वह अब भी भीमे का इन्तज़ार करता। भीमे के शरीर का स्पर्श उसे अब भी उतना ही नया और मादक लगता जितना चिट्टापाड़ा के जंगलों में छुप छुप कर उसकी रज़ामन्दी के बगैर छूते वक्त लगता था।

दोनों के बीच यह प्यार महज़ शारीरिक आकर्षण नहीं था। जहाँ भीमे रामदेव पर जान छिड़कती थी वहीं रामदेव भीमे की थोड़ी सी तकलीफ़ भी न देख पाता। वह उसे उदास नहीं

देख सकता था। इसीलिये उसने जब आज स्कूल से लौटी भीमे के चेहरे के हावभाव देखे तो बिना रुके सवाल किया।

'क्या हुआ भी?' दोनों प्यार से एक दूसरे को 'रामा' और 'भी' ही पुकारते। प्यार में शब्द छोटे हो जाते हैं और अपनापन बढ़ जाता है।

'कुछ नहीं...'

'कुछ नहीं भीऽऽ?' रामदेव ने आश्चर्य से कहा। 'बहुत कुछ है जो दिख रहा है मुझे।'

'कब आया तू रामा?'

भीमे ने बात बदलने की कोशिश की।

'अभी कुछ देर पहले... लेकिन भीमे हुआ क्या है?'

'कुछ काम नहीं मिला तुझे?' भीमे ने रामदेव की ओर देखे बगैर कहा। वह दीवार पर टंगे एक शीशे में अपना चेहरा देखने का बहाना करने लगी।

रामदेव के पास कोई नियमित रोज़गार नहीं था। कभी वह तेन्दूपत्ता ठेकेदारों के लिए काम करता तो कभी जगदलपुर में कपड़ों और मसालों के छोटे व्यापारियों की गाड़ियाँ चलाता।

'भीऽऽ तू बात बदलने की कोशिश कर रही है, तुझे पता है कि मुझे अभी तुरन्त कोई काम नहीं मिलने वाला है। क्या हुआ स्कूल में?'

भीमे अब भी शीशे में देख रही थी। कुछ देर तक वह चुप रही। उसने अपने दोनों होंठ दबाये और तकरीबन रुँधे हुए गले से बोली, 'रामा अब मन नहीं लगता पढ़ाने में... स्कूल में बिल्कुल मन नहीं लगता,' रामदेव पहली बार भीमे के सुर में इतनी मायूसी महसूस कर रहा था लेकिन उसे इस बात से सुकून मिला कि भीमे खुलकर बोल रही है।

'भीमे तू तो कहती थी बच्चों को पढ़ाने का ख़याल ही तुझे खुश कर देता है?'

रामा ने भीमे के पीछे खड़े होकर उसे अपनी बाँहों में ले लिया और अपनी ठोड़ी उसके सिर पर टिका दी। अब दोनों एक दूसरे को शीशे में देख रहे थे।

'हाँ रामा... मैं अब भी कहती हूँ कि बच्चों को पढ़ाना बहुत ज़रूरी है। सबसे बड़ा बदलाव यहीं से आयेगा...'

'तो फिर क्या हुआ? हिम्मत क्यों हार रही है तू भीऽऽ?'

रामदेव बस्तर के इन गाँवों में ही बड़ा हुआ। स्कूलों के हाल उसने बचपन से देखे थे। भीमे के भीतर शिक्षा फैलाने का जोश और धधकती हुई आग देखकर वह बहुत खुश होता। वह स्कूल से टीचरों के नदारद होने की कहानी भीमे से लगातार सुनता आया था, लेकिन उसने कभी भीमे की हिम्मत नहीं तोड़ी। रामदेव की हौसला अफ़ज़ाई का ही असर था कि भीमे एक चपरासी और कुछ बच्चों की मदद से स्कूल में दिन भर टिकी रहती लेकिन बाकी टीचरों की बेरुखी उसे तोड़ रही थी।

'रामा हम आदिवासियों को कोई इंसानों में नहीं गिनता। शहरी समाज की नज़र में वह गिनती में नहीं है। लगता है कि यहाँ के गरीब बच्चों को पढ़ने का कोई अधिकार है ही नहीं।' भीमे की आवाज़ काँप रही थी।

रामदेव ने भीमे को अपनी ओर घुमाया। उसने देखा भीमे आँसुओं को रोकने की भरपूर कोशिश कर रही है।

उसने सिर झुका लिया। आँसुओं से डबडबाई आँखें वह रामदेव को दिखाना नहीं चाहती थी। रामदेव ने उसके माथे को चूम लिया। तपती धूप में चलकर आयी भीमे के शरीर से पसीने की गंध महसूस की। भीमे ने थककर उसके सीने पर सिर रख दिया। वह अब खुलकर रो रही थी। रामदेव उसकी भावनाओं का गुबार निकलने का इन्तज़ार करता रहा।

थोड़ी देर बाद रामदेव ने उसकी ठोडी पकड़ कर ऊपर उठाई। आँसुओं से भीगे चेहरे पर उसे जज़्बात बिखरे दिखायी दिये। भीमे को इतना परेशान रामदेव ने अपने पिता हेड़िया की मौत के वक्त ही देखा था।

'बस कर भीऽऽ, रो मत,' रामा के गले से फिसलती हुई आवाज़ निकली।

कुछ देर तक खुलकर रोने के बाद भीमे ने ख़ुद को सँभालना शुरू किया। अब वह अपने आँसू पोंछ रही थी।

'भीमे, तू जानती है असली दिक्कत क्या है?' रामदेव ने सवाल किया।

भीमे ने रामदेव को देखा जैसे कहना चाहती हो, *मैं नहीं जानती तू ही बता दे ना*।

'स्कूलों में टीचरों का न आना। बच्चों की हाज़िरी कम होना। ये सब असली दिक्कत नहीं है भीमे,' रामदेव ने कहा। भीमे अब भी किसी स्कूली बच्चे की तरह रामदेव की ओर देख रही थी जो उसे कोई बड़ा ज़रूरी सबक पढ़ा रहा हो।

'असली दिक्कत है महिलाओं की भागेदारी न होना। माताओं में जागरूकता की कमी।'

भीमे चुप थी। उसे लग रहा था जैसे रामदेव किसी बड़ी पहेली की परतें खोल रहा है।

'भीऽऽ मेरे कहने का मतलब है ये गुरुजी लोगों को स्कूल में लाने का दबाव स्कूलों में बच्चों की हाज़िरी बढ़ने से बनेगा और बच्चों को स्कूल भेजने का दबाव माँओं से बनेगा।'

आदिवासी समाज में महिलायें हमेशा ही प्रमुख भूमिका में रही हैं। और यहाँ एक बार फिर से आदिवासी महिलाओं को पहल करनी होगी। रामदेव इस बात को भीमे को समझा रहा था।

'एक बार महिलायें तेरी बात समझ जायेंगी तो समझो आधा काम हो गया भीमे। जितनी आग पढ़ाई लिखाई को लेकर तेरे भीतर है अगर उसकी आधी समझ भी यहाँ महिलाओं में आ गयी ना तो समझो लड़ाई में जीत पक्की।'

मायूस हो चुकी भीमे को अचानक उम्मीद की एक किरण दिखी। उसे अपनी नसों में ख़ून दौड़ता हुआ महसूस हुआ।

उस रात देर तक भीमे बार बार करवटें बदल रही थी। स्कूल छोड़े या न छोड़े। कभी सोचती कल ही छोड़ दूँगी। फिर सोचती नहीं अभी तुरन्त तो कतई नहीं। उसे अपनी माली हालत का भी एहसास था और रामदेव के अनियमित रोज़गार से भी वह अनजान नहीं थी। लेकिन रामदेव से बातचीत के बाद अब उसकी मायूसी छँट चुकी थी। उसकी बात भीमे के दिल में घर कर गयी थी। महिलाओं को जोड़ने और मज़बूत करने की। उसे रामदेव की सोच पर हमेशा भरोसा था। उसकी होशियारी पर भी। लेकिन आज उसे अपने रामा पर फख़्र हो रहा था। इस लुटे-पिटे समाज के तानेबाने को वह कितनी अच्छी तरह समझता था !

भीमे ने तय किया कि वह महिलाओं का संगठन बनायेगी... लेकिन कौन हो सकता है...? कौन हो सकता है जो उसकी इस काम में मदद करे...? अचानक उसे किसी का ख़याल आया जो इसमें मददगार हो सकता था। परेशान भीमे की चेहरे पर एक मुस्कुराहट आ गयी। अब

वह चैन से सो सकती थी। उसने करवट ली तो देखा कि उसके बगल में लेटा रामदेव अब भी जगा था। वह मुस्कुराई। उसके रामा ने भीमे को आगोश में ले लिया। थोड़ी देर में दोनों को नींद आ गयी।

11

'सर डेल्टा को फिट कर दिया...'

इंस्पेक्टर शुक्ला की आवाज़ से एसपी संचित चौधरी की नींद टूटी। अगस्त की सड़ती उमस भरी गरमी में वह आराम से अपने दफ़्तर में कुर्सी पर सिर टिका कर बैठा था। एसी की वजह से कमरे का तापमान आरामदायक बना हुआ था। कुछ सोचते सोचते उसे झपकी आ गयी थी। उसने शुक्ला की आवाज़ सुनकर आँखें खोली। शुक्ला के साथ सब इंस्पेक्टर इम्तियाज़ अंसारी भी था। इन दोनों को अपने कमरे में मीटिंग के लिए संचित चौधरी ने बुलाया था। वह लगातार माओवादियों के ख़िलाफ़ योजना बनाने में लगा रहता। अप्पल राजू और करतम गंगा को पकड़ने के बाद उसने माओवादियों के कुछ और अहम साथियों को पकड़ने में कामयाबी हासिल की। गिरफ़्तारियाँ तो हर हफ़्ते होती रहतीं लेकिन उनमें ज़्यादातर गाँव के ही लोग होते जिनका माओवादियों से कुछ लेना-देना न होता। उन्हें शक के आधार पर पकड़ा जाता और कुछ हफ़्ते या एक दो महीने में वह छूट जाते। चौधरी इसी बीच अन्दरूनी गाँवों में अपने मुख़बिरों का नेटवर्क तैयार करने में लगा रहा।

'सर डेल्टा फिट हो गया,' शुक्ला ने चौधरी के सामने कुर्सी पर बैठते हुए दोबारा कहा।

'वैरी गुड। कहाँ लगाया उसे?'

'हेल्थ वर्करों के साथ।'

'मतलब?'

'सर चारों ओर मलेरिया फैला हुआ है। हर गाँव में लोग बीमार पड़ रहे हैं। सरकार ने मलेरिया विरोधी अभियान चलाया हुआ है। बहुत सारे हेल्थ वर्कर घूम रहे हैं गाँव गाँव में दवा बाँटने और मलेरिया की रोकथाम के लिए। कई एनजीओ इसमें जुड़ गये हैं। उन्हें लोगों की ज़रूरत है,' शुक्ला ने कहा।

'उन्हीं में से एक के साथ चिपका दिया सर। वॉलेण्टियर के नाम पर,' बाकी बात मुस्कुराते हुए सब इंस्पेक्टर अंसारी ने पूरी कर दी।

'ब्रिलियेन्ट !' चौधरी ने ख़ुशी से मुट्ठी टेबल पर पटकते हुए कहा। 'ब्रिलियेन्ट ! शुक्ला ब्रिलियेन्ट ! बोथ ऑफ यू आर जस्ट टू गुड।'

'सच तो ये है कि सर कि डेल्टा को कई और लोगों को इकट्ठा करने और मलेरिया विरोधी अभियान में जोड़ने का जिम्मा भी सौंपा है इस एनजीओ ने,' अंसारी ने कहा।

'इसका मतलब हम और लोग फिट कर सकते हैं...'

'जी सर,' शुक्ला बोला

'लेकिन इसमें ग़लती होने का चांस है,' चौधरी ने शंका के भाव से कहा। 'सब डेल्टा की तरह स्मार्ट नहीं हो सकते। अभी उसे अपना काम करने दो। लेट्स सी हाउ इट गोज़। उसके बाद तय करेंगे।'

शुक्ला और अंसारी ने उसकी बात स्वीकार करने के अन्दाज़ में सिर हिलाया।

‘चलो अभी मैं निकलता हूँ। मुझे रायपुर जाना है। तुम लोग अपना ख़याल रखो और लगे रहो,’ चौधरी ने कहा और कमरे से बाहर निकल गया।

12

रविवार का दिन था। भीमे सुबह सुबह ही सुरी के पास गयी।

सुरी उस वक्त गायों के लिए चारा बना रही थी। उसके हाथ सने हुए थे। सुरी अपनी गायों का भरपूर ख़याल रखती। चिट्टापाड़ा ही क्या यहाँ आसपास के गाँवों में कोई भी नहीं था जो सुरी की तरह अपने मवेशियों से प्यार करता। लोग जानवरों को यूँ ही जंगल में चरने भेज देते लेकिन सुरी अपनी गायों के लिए बाज़ार से ख़ास पशु आहार लाती। पौष्टिक और अपनी गायों का मनपसन्द। उसे जंगली घास में मिलाकर ख़ास चारा बनाती। हफ़्ते में कम से कम तीन बार।

सुरी ने भीमे को थोड़ी हैरत से देखा और फिर अपने दोनों हाथों से थकी हुई कमर को सहारा देते हुए कहा, ‘अरे भीमे, आज सुबह सुबह कैसे आ गयी तू।’

भीमे उसे मुस्कुरा कर देखती रही। कुछ बोली नहीं।

सुरी उसके जवाब का इन्तज़ार किये बगैर फिर से चारा बनाने में लग गयी। अपने जानवरों के लिए उसका ऐसा समर्पण भीमे को बड़ा अच्छा लगता।

‘मुझे लगता है तुझे किसी साथी की ज़रूरत कभी न होगी। इन्हीं गायों के साथ ज़िन्दगी बिता ले तू,’ भीमे ने सुरी को चिढ़ाते हुए कहा।

‘मैं जानवरों के साथ रहूँ या फिर अपने साथी को ही जानवर बना दूं, तू उसकी फ़िरक्र न कर रे,’ सुरी हँसते हुए बोली। ‘ये बता, कैसे आयी इतनी सुबह?’

सुरी उम्र में भीमे से करीब चार साल छोटी थी और उसकी सबसे करीबी सहेली थी। भीमे के दिमाग़ में क्या चल रहा है वह सुरी को सबसे अधिक और सबसे साफ़ पता होता। भीमे से छोटी होने के बावजूद सुरी को कई बार उसकी बड़ी बहन की तरह व्यवहार करना होता। जब भीमे अशान्त होती, उसका मन बेचैन होता तो सुरी उसे समझाती। कभी कभी डाँटती और झगड़ती भी। वह भीमे की राज़दार भी थी। उसके हर अगले कदम, दिमाग़ की हर उथल-पुथल की जानकारी सुरी के पास होती। सुरी और भीमे के बीच लगाव ऐसा था कि दोनों एक दूसरे की कोई बात न टालते और कुछ भी करने को तैयार रहते। ऊँचापाड़ा की जन अदालत में भीमे के पिता हेड़िया कुंजाम को जब माओवादी सज़ा सुना रहे थे तो उस दिन चिट्टापाड़ा के जंगलों में भीमे को जानकारी देने सुरी ही भागी भागी आयी थी। उस दिन से दोनों की दोस्ती में एक अलग ही अपनापन आ गया था।

शायद इसीलिये जब रामदेव ने भीमे से महिलाओं को संगठित करने को कहा तो सबसे पहले इस बारे में बात करने वह सुरी के पास ही आयी। उसे इस काम में सुरी की मदद भी चाहिये थी और सलाह भी।

‘अब स्कूल में मन नहीं लगता है सुरी,’ भीमे ने बात कहनी शुरू की और गम्भीर हो गयी। सुरी ने पानी की बाल्टी में हाथ डुबाये और अपनी घिसड़ी पर पोंछती हुई पास आकर खटिया पर बैठ गयी। भीमे अब भी खड़ी ही थी। उसने आगे बोलना शुरू किया।